Fortnightly per copy Rs. 4/- only

18th August 2019

ओ३म्

आर्य जीवन

ఆర్య జీవన్

संस्कृति संरक्षण व सामाजिक परिवर्तन का संकल्प

హిందీ - తెలుగు ద్విభాషా పక్ష పత్రిక

Date of Publication 2nd and 17th of every Month, Date of Posting 3rd and 18th of every Month

आर्य प्रतिनिधि सभा आ.प्र. -तेलंगाना द्वारा प्रकाशित

सत्यार्थ प्रकाश के तेलुगु संस्करण का

लोकार्पण समारोह सम्पन्न

समारोह में माता निर्मला योग भारती जी, स्वामी धर्मेश्वरानन्दजी गुरुकुल पूठ उ.प्र., आचार्य आनन्द प्रकाश जी, आचार्य उदयन जी, स्वामी ब्रह्मानन्द जी सरस्वती, आचार्य भवभूती जी, आचार्य नीरजा जी, आचार्य सुब्बाराव जी, पं. चलवादि सोमय्या जी, श्रीमती अमृता कुमारी जी व प्रसिद्ध उद्योग प्रति डॉ. दयानन्द गौरी ज, श्रीमती मीरा गौरी जी, डॉ. वसुधा शास्त्री जी, श्री रामचन्द्रा रेड्डी जी आदि उपस्थित रहे ।

मुख्य अतिथि पूर्व केन्द्रीय मंत्री श्री भण्डारू दत्तात्रेय जी के सानिध्य में लोकार्पण समारोह सम्पन्न हुआ

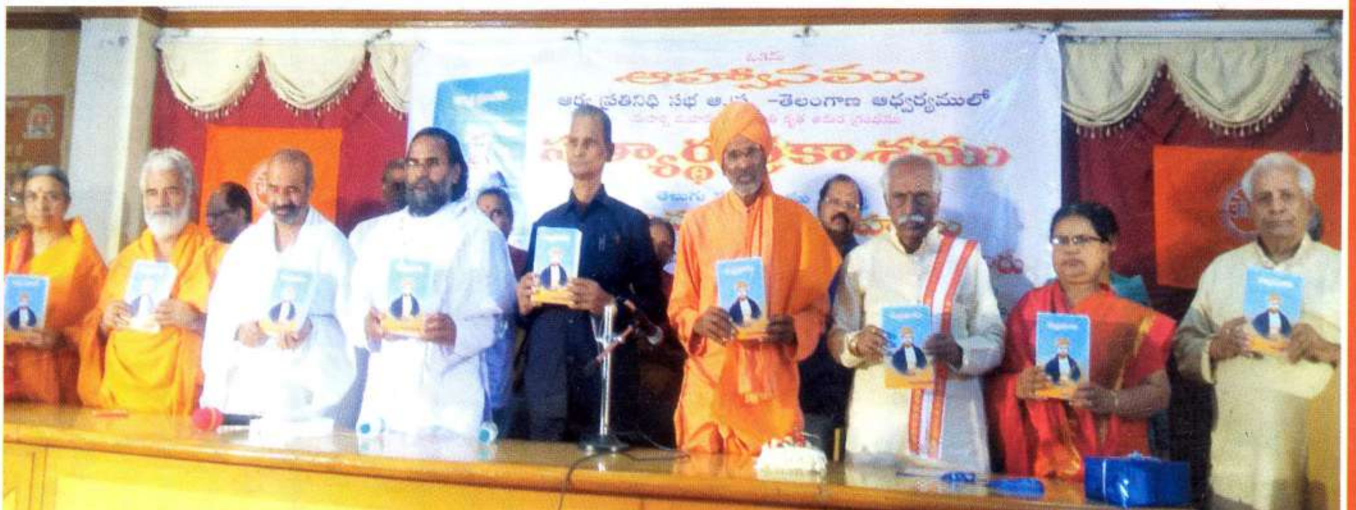

हिन्दी मिलाप

सत्यार्थ प्रकाश के तेलुगु संस्करण का लोकार्पण समारोह संपन्न

हैदराबाद, 5 अगस्त-(मिलाप ब्यूरो) आर्य प्रतिनिधि सभा, आ.प्र.-तेलंगाना के तत्वावधान में सत्यार्थ प्रकाश के तेलुगु संस्करण का लोकार्पण समारोह ठा. लक्ष्मण सिंह की अध्यक्षता में किया गया। मुख्य अतिथि पूर्व केंद्रीय मंत्री बंडारू दत्तात्रेय ने पुस्तक का लोकार्पण किया।

आज यहाँ जारी प्रेस विज्ञप्ति के अनुसार, अवसर पर विशेष अतिथि के रूप में आर्य प्रतिनिधि सभा, उत्तर-प्रदेश के महामंत्री व दयानंद गुरुकुल के आचार्य स्वामी धर्मेश्वरानंदजी उपस्थित थे। सभा का संचालन सभा मंत्री प्रो. विट्ठल राव आर्य ने महर्षि दयानंद सरस्वती कृत कालजयी ग्रंथ का विशेष रूप से परिचय करवाया। लगभग 20 भाषाओं में पुस्तक का अनुवाद हुआ है। स्वामी ब्रह्मानंद सरस्वतीजी ने कहा कि संतान का निर्माण माता करती है। इसीलिए माता को निर्माता भवति कहा गया है। भारत समाज में संतान निर्माण पर वेदों द्वारा प्रतिपादित संतान निर्माण विज्ञान को समझने और समझाने की जरूरत है।

पूर्व केंद्रीय मंत्री बंडारू दत्तात्रेय ने सत्यार्थ प्रकाश पुस्तक का लोकार्पण कर विद्वानों का सम्मान किया। उन्होंने कहा कि सत्यार्थ प्रकाश एक अद्भुत ग्रंथ है। राष्ट्र निर्माण में स्वामी दयानंद सरस्वती, उनके द्वारा रचित ग्रंथ सत्यार्थ प्रकाश और आर्य समाज ने आजादी के आंदोलन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। सांस्कृतिक पुनर्जागरण का शंखनाद तथा धार्मिक, सामाजिक सुधार का आंदोलन मात्र आर्य समाज ने किया है। आर्य समाज न होता, तो निजाम से हैदराबाद की मुक्ति संभव नहीं थी। आर्य समाज एक प्रखर विचार का आंदोलन है। इसीलिए आर्य समाज की आवश्यकता कल थी, आज है और आगे भी रहेगी।

स्वामी धर्मेश्वरानंदजी ने कहा कि सामान्य गाँव का किसान भी आर्य समाज की शिक्षाओं से प्रभावित रहा है। कई लोगों को सत्यार्थ प्रकाश ने प्रभावित किया, जिसकी वजह से कई लोग साधु-संत और तपस्वी महात्मा बने। आज इस बात की बहुत आवश्यकता है कि हजारों-हजारों की संख्या में सत्यार्थ प्रकाश का वितरण किया जाए। माता निर्मला योग भारतीजी ने कहा कि सत्यार्थ प्रकाश की शिक्षाओं में से एक-दो गुणों का आचरण कर लिया जाए, तो जीवन सुधर सकता है।

अवसर पर तेलुगु के महान कवि स्व. माचिराजू शिवराजराजू द्वारा महर्षि दयानंद सरस्वती के जीवन चरित्र पर लिखित प्रबंध काव्य (तेलुगु में) ग्रंथ तथा डॉ. चंद्रय्या कृत ज्योतिबा फूले के जीवन पर आधारित ग्रंथ का भी लोकार्पण किया गया।

अवसर पर विद्वानों में स्वामी ब्रह्मानंद सरस्वती कामारेड्डी माता निर्मला योग भारती, आचार्य उदयन, आचार्य भवभू आचार्य आनंद प्रकाश, आचार्या नीर डॉ. वसुधा शास्त्री, आचार्य को सुब्बाराव, पं. चलवादि सोमय माचिराजू अमृता कुमारी, प्रि उद्योगपति दयानंद गौरी, मीरा गौ रामचंद्रा रेड्डी व अन्य उपस्थित थे। स का संचालन प्रो. विठ्ठल राव आर्य (स मंत्री) ने किया।

कार्यक्रम का दीप प्रज्वलन स्वामी धर्मेश्वानंद एवं आर्य प्रति सभा, उत्तर प्रदेश के आचार्य प्रकाश, उदयनाचार्य व नीरजा आ ने समारोह का उद्घाटन किया। आं प्रदेश व तेलंगाना आर्य समाज सदस्य, विद्वानों एवं दानदाताओं सभा की ओर से सम्मान किया ग ठाकुर लक्ष्मण सिंह (सभा प्रधान) अध्यक्षीय संदेश में ग्रंथ के ते संस्करण के प्रकाशन की भूरि-भ प्रशंसा की। सभा उप-प्रधान हरिकि वेदालंकार ने धन्यवाद ज्ञापित कि

आर्य प्रतिनिधि सभा आ.प्र. -तेलंगाना द्वारा प्रकाशित

सत्यार्थ प्रकाश के तेलुगु संस्करण का

लोकार्पण समारोह सम्पन्न

स्वामी ब्रह्मानन्द सरस्वती जी एवं सभा प्रधान श्री ठा. लक्ष्मण सिंह जी दीप प्रज्वलित कर समारोह का उद्घाटन किया । चित्र में आचार्य आनन्द प्रकाश जी, आचार्य उदयन जी, सभा मंत्री श्री विट्ठल राव आर्य व उपप्रधान हरिकिशन वेदालंकार दिखाई दे रहे हैं ।

उपप्रधान मुख्य अतिथि पूर्व केन्द्रीय मंत्री श्री बण्डारू दत्तात्रेय जी का सम्मान करते हुए सभा प्रधान श्री ठा. लक्ष्मण जी, उपप्रधान श्री हरिकिशन वेदालंकार जी, सभा मंत्री श्री विट्ठलराव जी आर्य व उपमंत्री पी. सत्यनारायण जी

अन्धविश्वास की गहरी होती जड़ें

-जयंत नार्लीकर

प्रसिद्ध भौतकविद् डॉ. जयंत विष्णु नार्लीकर ब्रह्माण्ड विज्ञान (कास्मोलाजी) के क्षेत्र मे अंतर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त हैं। सर फ्रेड हॉयल के साथ मिलकर गुरुत्वाकर्षण के क्षेत्र में किये गये उनके महत्त्वपूर्ण कार्य को सारी दुनिया में हॉयल नार्लीकर थ्योरी के रूप में जाना जाता है। १६७२ तक डॉ. नार्लीकर किंग्स कॉलेज, कैंब्रिज में फैलो थे। १६७२ में मुम्बई स्थित टाटा इंस्टीट्यूट ऑफ फंडामेंटल रिसर्च में प्रोफेसर के रूप में उन्होंने कार्य शुरू किया। वह इंटरेशनल एस्टोनॉमिकल यूनियन के ब्रह्माण्ड विज्ञान आयोग के अध्यक्ष भी थे। २००४ में भारत सरकार ने उन्हें पदम् विभूषण से और २०१० में महाराष्ट्र सरकार ने महाराष्ट्र भूषण सम्मान से सम्मानित किया.. डॉ. नार्लीकर ने निरंतर अपने लेखन के जरिये यह प्रयास किया है कि लोगों के अंदर एक वैज्ञानिक नजरिया विकसित हो। यहाँ हम उनका एक लेख प्रस्तुत कर रहे हैं जो अनेक अंधविश्वासों से मुक्त होने में सहायक हो सकता है। -सम्पादक

जब कोई एक खगोल विज्ञानी की तरह मेरा स्वागत करते हुए यह जानना चाहता है कि ग्रहों का हमारे भाग्य पर क्या असर पड़ता है तो मैं हैरान हो उठता हूँ। यह सवाल करने वाला आम तौर पर कोई निरक्षर ग्रामीण हीं होता। वह हाथ में मोबाइल फो लिए कोई शिक्षित भारतीय नागरिक होता है। क्या उसे इस बात की जानकारी नहीं है कि वैज्ञानिक लोग ज्योतिष को गंभीरता से नहीं लेते ?

यह विचार कि मनुष्य के भाग्य का संचालन ग्रहों से होता है काफी पुराना बल्कि यूं कहें कि यह बेबीलोन और ग्रीक संस्कृतियों के जमाने से है। वैसे देखा जाये तो वेदों में ग्रहों से चालित ज्योतिष का कोई उल्लेख नहीं है। ग्रहों और सौर मंडल का अध्ययन करने वालों ने इस तथ्य पर ध्यान दिया है कि अत्यंत नियमित ढंग से तारों के आकाशीय डाँचे में कुछ पिण्ड ऐसे हैं जिनकी गति एक जैसी है और जो कभी पीछे तो कभी आगे जाते हैं। ग्रीक लोग इन ग्रह पिण्डों को अपनी भाषा में घुमक्कड़ कहते हैं। ये ग्रह घूमते क्यों हैं ? वैज्ञानिक रूझान वाले प्रेक्षकों ने अरस्तू का पालन किया और ग्रहों की गति को रेखागणित की दृष्टि से परिभाषित ऐसे ढाँचे में रखा जिससे इस घूमने की प्रक्रिया के तरीके को ढूंढा जा सकें।

जो लोग इस समूह में नहीं थे उन्हें यह मान लिया कि ये ग्रह अपनी इच्छाशक्ति के कारण चक्कर लगाते रहते हैं। इस अवधारणा के आधार पर उन्होंने निष्कर्ष निकाला कि ग्रहों की इच्छाशक्ति का प्रभाव पृथ्वी पर रहने वाले नश्वर प्राणियों पर भी पड़ता है। यही विश्वास बड़ा रूप लेते-लेते ज्योतिष बन गया।

इस विश्वास ने दूर-दूर तक यात्रा की और भारत में इसके प्रति अत्यन्त सकारातमक भाव देखने को मिला। वैज्ञानिक नजरिए को अनेक झटके लगे। लेकिन आगे चलकर कोपरनिकस, गैलीलियो और केप्लर ने ग्रहो की गति के पीछे जो वास्तविक पपैटर्न है इसका पता कर लिया।

१७वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में केप्लर की खोजो ने न्यूटन को गुरुत्वाकर्षण के नियम की खोज के लिए प्रेरित किया। आज हमें पता है कि ग्रहों की गति क्यों है। उनकी कोई इच्छाशक्ति नहीं होती। इसके विपरीत उनकी एक आंतरिक व्यवस्था होती है जिसके अनुसार वे गणितीय ढंग से निर्धारित फेरों के अनुसार सूर्य के चारों तरफ घूमत हैं। आज अंतरिक्ष वैज्ञानिक इस स्थिति में हैं कि वे एकदम सही-सही इस बात की गणना कर सकें कि उनका भेजा हुआ अंतरिक्ष यान किस ग्रह से और किस स्थान पर जाकर मिलेगा। इसलिए अब न केवल ग्रहों के साथ जुड़ा रहस्य गायब हो चुका है बल्कि अब इनका अध्ययन एक भौतिक पिण्ड के रूप में किया जाता है जो हमारे सौर मण्डल का एक हिस्सा है। इस पृष्ठभूमि में अगर देखें तो यह अजीब सी बात लगती है जब लोग यह सवाल करते हैं कि ग्रहों का उनके जीवन पर क्या प्रभाव पड़ता हैं।

भारतीयों के मानस में ज्योतिष उसी तरह जड़ जमाकर बैठा है जैसे जातिप्रथा। मैंने ४० से अधिक देशों की यात्राएँ की हैं और नक्षत्र विज्ञान से सम्बन्धित विषयों पर भाषण दिए हैं। मैंने देखा है कि भारत एकमात्र ऐसा देश है जहाँ हर भाषण के बाद कोई न कोई यह सवाल जरूर करता है कि ग्रहों का हमारे जीवन पर क्या प्रभाव पड़ता है। यद्यपि अनेक देशों में अखबारों में शशिफल जैसी चीजें प्रकाशित होती रहती हैं लेकिन भारत में ही इसे गंभीरता से लिया जाता है। लोग यह जानने के लिए परेशान रहते हैं कि पुराना घर छोड़कर नए घर में किस समय जाया जाए ? यात्रा करने के लिए कौन सा शुभ मुहूर्त है ? क्या कार या

स्कूटर खरीदने के लिए यह ठीक समय है ? क्या शादी-ब्याह के लिए लड़के-लड़की की कुंडली मिला ली जाये अथवा कब कोई मुख्यमंत्री अपने मंत्रिमण्डल को शपथ ग्रहण कराए इसके लिए भी ग्रहों की मदद ली जाती है।

सवाल करने वाले की ओर से यह दलील दी जा सकती है कि कहीं कोई अज्ञात भौतिक सम्बन्ध होगा जिसके जरिए अलग-अलग समय में पैदा हुए लोगों पर अलग-अलग ग्रहों का प्रभाव पड़ता होगा। जो भी हो आधुनिक विज्ञान यह दावा तो नहीं करता कि उसने सारी चीजों की खोज कर ली है।

अगर इस संभावना को थोड़ी देर के लिए मन भी लें तो कोई भी व्यक्ति ग्रहों के प्रभावों के दावों का अनुव सिद्ध अध्ययन कर सकता है। वैज्ञानिकों ने इस तरह के नियंत्रित प्रयोग किए हैं और इस नतीजे पर पहुँचे हैं कि मनुष्य के जीवन पर ग्रहों से पड़ने वाले प्रभाव की परिकल्पना का कोई आधार नहीं है। एक ही तारीख में विभिन्न अखबारों द्वारा दी गयी राशिफल पर एक नजर दौड़ाइए। वे कभी एक जैसे नहीं होते। विज्ञान आगे इसलिए बढ़ सका क्योंकि इसने परिकल्पनाओं या सिद्धान्तों के प्रति एक तर्कसंग दृष्टिकोण अपनाया। किसी भी सिद्धन्त को गंभीरता से लेने के लिए भी तथ्यों के साथ इसकी भविष्यवाणियों में भी निरंतरता होनी चाहए। हो सकता है कि कोई सिद्धान्त आज इस मानक पर खरा उतर जाये लेकिन भविष्य में कुछ नए तथयों की व्याख्या करने में विफल हो जाये। वैसी हालत में उस सिद्धान्त मे संशोधन किया जाना चाहिए या उके स्थान पर नया सिद्धान्त लाना चाहिए। यह व्यवस्था जिसने विज्ञान की प्रगति में इतनी अच्छी तरह काम किया है इसका पालन हमें अपने दैनिक जीवन में भी करना चाहिए चाहे हम वैज्ञानिक हों या न हों।अगर हमसे कहा जाता है कि अमुक विचार को इसलिए मानना चाहिए क्योंकि हमारी परंपरा ऐसा कहती है तो हमें सका विरोध करते हुए उस विचार के समर्थन में तथ्यात्मक साक्ष्यों की खोज करनी चाहिए। यही वैज्ञानिक सोच है। अगर वैज्ञानिक सोच के साथ ज्योतिष की छानबीन करें तो उसका अस्तित्व कहीं नहीं टिकता। अपनी पुस्तक 'भारत की खोज' में जवाहर लाल नेहरू ने वैज्ञानिक मिजाय के पक्ष में दलीलें दी थीं। उन्होंने इस तथ्य पर खेद व्यक्त किया कि हम अपनी परंपराओं से अभिभूत हो जाते हैं और बुद्धिमान लोगों की भी आलोचना की ग्रंथि काम करना बंद कर देती है। न्होंने यह उम्मीद जताई थी कि राजनीतिक आजादी से इन स्थितियों में परिवर्तन आयेगा।

आजादी के ६० साल बाद भी अज्ञानता और अंधविश्वास तेजी के साथ फल-फूल रहा है। याद करिये कि जब यह खबर आई कि गणेश की मूर्ति दूध पी रही है तो इस पर लोगों ने कितने मूर्खतापूर्ण ढंग से काम किया। यह भारत में ही संभव है कि अंतर्राष्ट्रीय क्रिकेट मैचों से पूर्व अनेक टीवी चैनल मजे हुए खिलाड़ियों के सात कुछ ज्योतिषियों को भी यह बताने के लिए ठा देते हैं कि कौन सी टीम जीतेगी या हारेगी। ज्योतिष में विश्वास, साधुओं और बाबाओं के चमत्कारों तथा वस्तुशास्त्र के प्रति निष्ठा में कमी आने की बजाय, जैसा कि नेहरू ने अपेक्षा की थी, लगातार वृद्धि होती गई है। वैज्ञानिक मिजाज की नेहरू की कल्पना धराशायी हो चुकी है। क्या हम २१ वीं शताब्दी मे रह रहे हैं या १८वीं शताब्द में ?

चेंगिचेर्ला आर्य समाज के सौजन्य से श्रावणी उपाकर्म पर्व व आर्य सत्याग्रह बलिदान दिवस सम्पन्न

स्वतन्त्रता दिवस पर

देश की आजादी और आर्यसमाज

मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून

सृष्टि के आदि काल से महाभारत काल तक भारत का सारी दुनिया पर चक्रवर्ती राज्य रहा है। युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में भी प्रायः पूरे विश्व के राजा आये थे और उन्होंने युधिष्ठिर को अपना नेता व चक्रवर्ती राजा स्वीकार किया था और उनको अपने अपने देश की मूल्यवान वस्तुयें भेंट में दी थी। महाभारत युद्ध के कारण भारत का पतन हुआ। सबसे बड़ा पतन वेदों के ज्ञान व विज्ञान का अध्ययन-अध्यापन व प्रचार बन्द हो गया जिससे भावी देशवासी अज्ञानी व अल्पज्ञानी होकर आपस में ही विवाद करने लगे। इससे देश में छोटे-छोटे राज्य अथवा रिसायतें अस्तित्व में आईं। एक बार वेदज्ञान के विलुप्त होने पर उसको पुनः प्राप्त करना व जन-जन तक उसका प्रचार व उससे अवगत कराना सरल कार्य नहीं था। अतः देश की भावनात्मक एकता भी वेदज्ञान के लोप होने से भंग होना आरम्भ हो गयी। इसका परिणाम था कि समय के साथ-साथ देश में अविद्यायुक्त मत उत्पन्न होना आरम्भ हो गये। इन मतों ने अज्ञान व अन्धविश्वासों को दूर करने के स्थान पर स्वमेव नये-नये अन्धविश्वासों व कुपरम्पराओं को जन्म दिया। समय के साथ-साथ अविद्यायुक्त मत-मतान्तरों की संख्या में वृद्धि होती गई और देश कमजोर होता रहा। आवश्यकता तो धर्म व मतों की अविद्या को दूर करने का था परन्तु मत-मतान्तरों ने यह भ्रान्ति पाल ली की उनकी सभी मान्यतायें पूर्णतया सत्य पर आधारित हैं। उन पर विचार व उनमें संशोधन की आवश्यकता ही नहीं है। सभी मत अपने विरोधी मतों को बुरा कहते रहे परन्तु अपने मत की अविद्यायुक्त बातों को दूर करने का किसी ने प्रयत्न नहीं किया।

भारत से बाहर भी महाभारत काल के बाद मतों का आविर्भाव हुआ जिनमें अविद्या विद्यमान थी परन्तु किसी मत व उसके आचार्य ने अविद्या को जानने व पहचानने तथा उसे दूर करने की प्रक्रिया को अपनाया हो, इसका उदहारण व प्रमाण नहीं मिलता। ऋषि दयानन्द ने मत-मतान्तरों की अविद्या व उससे मनुष्य समुदाय को होने वाली हानियों पर विचार किया और उसे अपने अमर ग्रन्थ ''सत्यार्थ-प्रकाश'' में स्थान दिया है। इस कारण सत्यार्थप्रकाश अविद्या को जानने व उसके निवारण के उपायों को बताने का एक प्रमुख साधन बन गया है। सत्यार्थप्रकाश का अध्ययन करके देश-देशान्तर का कोई भी मनुष्य मत-मतान्तरों की अविद्या सहित विद्या को जान सकता है और उसका पालन करते हुए विद्या से प्राप्त होने वाले अमृत, मोक्ष व परमानन्द को प्राप्त कर सकता है। इस दृष्टि से सत्यार्थप्रकाश संसार का सबसे उत्तम व महत्वपूर्ण ग्रन्थ है। सभी लोगों को इस ग्रन्थ का अध्ययन करना चाहिये और इससे लाभ उठाना चाहिये। संसार में सत्य से बढ़कर कोई भी उत्तम व मूल्यवान पदार्थ नहीं है और असत्य से घटिया, निकृष्ट तथा मनुष्य जीवन को हानि पहुंचाने वाला पदार्थ नहीं है। मनुष्य के जन्म-जन्मान्तरों में दुःख का साधन असत्य व तद्जनित पाप कर्म ही होते हैं, यह यथार्थ ज्ञान सत्यार्थप्रकाश को पढ़कर इसके अध्येता को होता है। सत्यार्थप्रकाश से प्राप्त होने वाला ज्ञान वेदों का ज्ञान है जो सृष्टि के आरम्भ में इस सृष्टि के उत्पत्तिकर्ता सर्वव्यापक, सर्वज्ञ व सर्वशक्तिमान ईश्वर ने चार ऋषियों अग्नि, वायु, आदित्य और अंगिरा को दिया था।

ईसा की १६वी शताब्दी के आरम्भ में देश से वेदों का ज्ञान प्रायः विलुप्त हो गया था। आज हम जिस गायत्री मन्त्र का गान करते हैं और उसका अर्थ भी सर्वसुलभ है, उस मन्त्र व उसके अर्थ को कोई जानता ही नहीं था। यह सब आर्यसमाज के संस्थापक ऋषि दयानन्द की देन है। ऋषि दयानन्द का जन्म दिनांक १२-२-१८२५ को को गुजरात के मौरवी नगर के ग्राम टंकारा में एक पौराणिक शिवभक्त पिता के परिवार में हुआ था। आयु के चौदहवें वर्ष में उन्हें मूर्तिपूजा से जुड़ी अलौकिक व अन्धविश्वासों से युक्त बातों की असत्यता के दर्शन हुए थे। उन्होंने मूर्तिपूजा छोड़कर सच्चे शिव वा ईश्वर की खोज आरम्भ कर दी थी। घर में बहिन और चाचा की मृत्यु से उन्हें वैराग्य हो गया था। अतः उन्होंने ईश्वर व मृत्यु की औषधि की खोज में अपने घर व

परिवार का त्याग कर दिया और देश भर में घूम कर साधु-संन्यासीं-योगियों व धर्मज्ञानियों की शरण में ज्ञानप्राप्ति हेतु गये। वह उनसे प्रश्नोत्तर करते रहे और उनसे सत्य को जानने का प्रयास करते रहे। इस बीच उन्हें दो सच्चे योग गुरु मिले जिनसे योग सीख कर और योग का अभ्यास कर उन्होंने योग की अन्तिम सीढ़ी ''समाधि" का भी साक्षात अनुभव कर ईश्वर का प्रत्यक्ष किया। इस उच्च योग्यता को प्राप्त करने पर भी ऋषि दयानन्द की तृप्ति नहीं हुई। वह और अधिक विद्या प्राप्त कर अपनी आत्मा को ज्ञान से आलोकित करना चाहते थे। स्वामी पूर्णानन्द सरस्वती जी की प्रेरणा से ऋषि दयानन्द सन् १८६० में मथुरा में स्वामी विरजानन्द सरस्वती जी के पास अध्ययन के लिये पहुंचें तथा उनसे अष्टाध्यायी, महाभाष्य, निरुक्त, उपनिषद, दर्शन, वेद आदि का ज्ञान प्राप्त कर ज्ञान की उच्चतम स्थिति को प्राप्त किया। तीन वर्ष में अपनी विद्या को पूरा करके गुरु दक्षिणा के अवसर पर उन्हें गुरुजी ने समाज व देश से अविद्या दूर कर विद्या का प्रचार व प्रकाश करने की प्रेरणा की। दयानन्द जी ने अपने गुरु की इच्छा को तथास्तु कहकर स्वीकार किया। उसके बाद से वह अविद्या दूर करने के कार्यों में लग गये।

विद्या के स्रोत चार वेदों को उन्होंने प्राप्त कर उनकी परीक्षा की और अपने सभी सिद्धान्तों पर वेदों पर आधारित किया। वेद सच्चिदानन्दस्वरूप, निराकार, सर्वज्ञ, सर्वशक्तिमान, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, अजर, अमर, अनादि और नित्य स्वरूप वाले ईश्वर का प्रतिपादन करते हैं और स्तुति, प्रार्थना तथा उपासना सहित सदाचरण से उसकी प्राप्ति बताते हैं। ऋषि दयानन्द ने मत-मतान्तरों में विद्यमान अविद्या का खण्डन और सत्य व तर्कयुक्त वैदिक मान्यताओं का मण्डन आरम्भ किया। वह देश भर में घूमे। अपने समय के योग्य व ज्ञानी पुरुषों से मिले। सबसे उन्होंने मन्त्रणा की और वेदों के महत्व को समझाया। बहुत से लोगों ने महत्व को समझा परन्तु अपने हितों व स्वार्थों को छोड़ न सकने के कारण ऋषि दयानन्द से सहयोग न कर सके। ऋषि दयानन्द अपना उद्देश्य, कर्तव्य व लक्ष्य निर्धारित कर चुके थे। वह अपने मार्ग पर आगे बढ़ते रहे और देश व समाज को अविद्या के अन्धकार व गड्ढे से निकालने का प्रयत्न करते रहे। इसका परिणाम ही आर्यसमाज की स्थापना, सत्यार्थप्रकाश, ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका, वेद भाष्य आदि ग्रन्थों की रचना, मौखिक प्रचार सहित लोगों से शास्त्रीय वार्ता एवं शास्त्रार्थ आदि कार्य रहे। उन्होंने अन्धविश्वासों की समीक्षा कर उन्हें छोड़ने की प्रेरणा की और बाल विवाह, विधवाओं पर अत्याचार, छुआछूत, ऊंच-नीच, फलित ज्योतिष, जन्मना जातिवाद का पुरजोर विरोध व खण्डन किया। वह वेद व योग सहित आधुनिक ज्ञान-विज्ञान के अध्ययन के आग्रही थे। इसके परिणाम से देश में जागृति उत्पन्न हुई। स्वामी दयानन्द ने ही स्त्रियों को उनके वेदाधिकार व समाज में उच्च गौरवमयी स्थिति को प्राप्त कराया। देश में ज्ञान-विज्ञान का जो प्रकाश हुआ एवं समाज का वर्तमान में जो आधुनिक स्वरूप बना है, उसकी नींव में ऋषि दयानन्द के विचार व कार्य ही हमें दृष्टिगोचर होते हैं। देश की आजादी में भी उनके ही प्रयत्नों की देन है। देश की आजादी का विचार भी सर्वप्रथम उन्होंने ही अपने अमर ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश के माध्यम से देश को दिया था।

देश अपनी अविद्या, अन्धविश्वासों एवं मिथ्या व अनुचित सामाजिक परम्पराओं से विश्रृंखलित होकर पहले मुसलमानों का तथा बाद में ईसाई मतानुयायी अंग्रेजों का गुलाम बना। इन सभी ने देश का शोषण किया तथा आर्य-हिन्दू जाति पर अमानवीय अत्याचार किये। बड़ी भारी संख्या में हिन्दुओं का धर्मान्तरण वा मतांतरण भी किया गया। आज देश में इन समुदायों के जो लोग दिखाई देते हैं वह सब धर्मान्तरण के कारण ही अस्तित्व में आयें हैं। देश का सामाजिक स्वरूप इन कारणों से बिगड़ा और आर्य-हिन्दुओं को अनेक दुःखद विपरीत परिस्थितियों से गुजरना पड़ा। हम जब देश की आजादी की बात करते हैं तो हमें सत्यार्थप्रकाश में ऋषि दयानन्द के लिखे शब्द स्मरण हो आते हैं। उन्होंने सत्यार्थप्रकाश में लिखा है ''कोई कितना ही करे परन्तु जो स्वदेशीय राज्य होता है वह सर्वोपरि उत्तम होता है। अथवा मत-मतान्तर के आग्रहरहित, अपने और पराये का पक्षपातशून्य, प्रजा पर पिता-माता के समान कृपा, न्याय और दया के साथ विदेशियों का राज्य भी पूर्ण सुखदायक नहीं है।" उन्होंने इसके आगे लिखा है 'परन्तु भिन्न-भिन्न भाषा, पृथक-पृथक् शिक्षा, अलग व्यवहार का विरोध छूटना अति दुष्कर है। विना इसके छूटे परस्पर का पूरा उपकार और अभिप्राय (देश की स्वतन्त्रता की प्राप्ति,

अविद्या का नाश और समाजोन्नति) सिद्ध होना कठिन है। इसलिये जो कुछ वेदादि शास्त्रों में व्यवस्था वा इतिहास लिखे हैं उसी का मान्य करना भद्रपुरुषों (देशभक्त स्वतन्त्रता-प्रेमियों) का काम है।'

ऋषि दयानन्द ने सन् १८८३ में जब सत्यार्थप्रकाश में उपर्युक्त शब्दों को लिखा था तब भारत में कोई राजनीतिक या सामाजिक दल नहीं था। धार्मिक संस्थायें अनेक थी परन्तु उनमें किसी प्रकार का परस्पर सहयोग नहीं था। कोई धार्मिक संस्था अंग्रेजों के विरोध में नहीं थी। इसके विपरीत ब्रह्मसमाज जैसी संस्थायें तो अंग्रेजी राज्य को वरदान मानती थी। देश की जनता अज्ञान व अन्धविश्वासों में फंसी हुई थी। ऐसी स्थिति में ऋषि दयानन्द ने उपर्युक्त शब्द लिखकर देशवासियों को आजादी प्राप्त करने की प्रेरणा की थी। सत्यार्थप्रकाश से इतर अपने अन्य ग्रन्थों में भी उन्होंने देश को स्वतन्त्र कराने के लिये प्रेरणा की है। ईश्वर से प्रार्थना करते हुए वह कहते हैं कि 'हमारे देश विदेशी राजा न हों'। 'हम कभी परतन्त्र न हों' आदि। आर्यसमाज की सन् १८७५ में स्थापना के बाद सन् १८८५ में कांग्रेस की स्थापना हुई। उन दिनों काग्रेस का गठन अंग्रेजों का विरोधा करने के लिये नहीं अपितु अपने लिये उनसे कुछ अधिकार प्राप्त कर उनके साथ सहयोग करने के लिये बनी थी। कालान्तर में इससे नये-नये नेता जुड़ते रहे और तब इसमें देश को अधिक अधिकार देने की बातें की जाने लगीं। देश को पूर्ण आजादी का निर्णय तो सन् २६-१-१६३० में लिया गया था। यह भी एक तथ्य है कि कांग्रेस के अनुगामियों में सहयोग करने वाले लोगों में अधिकांश आर्यसमाज के अनुयायी ही थे। ऐसा माना जाता है कि ८० प्रतिशत आर्यसमाजी कांग्रेस के आजादी के आन्दोलन से जुड़े थे।

यह भी ज्ञातव्य है कि देश में नरम व गरम दो दलों ने आजादी के आन्दोलन में योगदान दिया है। गरम दल वा क्रान्तिकारियों का प्रथम नेता पं० श्यामजी कृष्ण वर्म्मा को माना जाता है। वह ऋषि दयानन्द के साक्षात् शिष्य थे। वर्मा जी ने इंग्लैण्ड जाकर आजादी के लिये कार्य किया था। भारत से जाने वाले अनेक क्रान्तिकारी युवक पं० श्यामजी कृष्ण वर्मा द्वारा स्थापित इण्डिया हाउस में रहते थे व उनसे छात्रवृत्ति प्राप्त करते थे। वीर सावरकर भी इनमें से एक थे। वीर सावरकर जी ने सन् १८५७ को देश की आजादी का प्रथम स्वतन्त्रता संग्राम कहा था। उनका लिखा इस शीर्षक का ग्रन्थ अत्यन्त महत्वपूर्ण एवं खोजपूर्ण होने सहित इतिहास के अनेक रहस्यों का अनावरण करता है। सभी क्रान्तिकारियों का एक ही ध्येय था कि देश को अंग्रेजों की दास्ता से मुक्त कराना है। यह लोग हिंसा का उत्तर हिंसा से देने में संकोच नहीं करते थे। कहावत भी है कि 'प्रेम तथा युद्ध में सब जायज है'। देश को मिली स्वतन्त्रता में देश के क्रान्तिकारियों का सर्वाधिक योगदान है। देश की आजादी में इन लोगों को किसी प्रकार का पुरस्कार नहीं मिला जबकि अहिंसात्मक आन्दोलन में भाग लेने वाले सभी लोग अनेक पदों व पेंशन आदि से पुरस्कृत हुए। देश के ७२ वर्ष के शासन से यह बात सामने आयी है कि अहिंसा से देश नहीं चल सकता। आजादी के बाद से भारत के चीन तथा पाकिस्तान से अनेक युद्ध हो चुके हैं। यदि हम अहिंसा की ही नीति पर चलते तो आज देश के अस्तित्व का बचना भी कठिन था। बंगला देश के लोगों ने भी गुरिल्ला युद्ध करके तथा भारत की सहायता से ही पाकिस्तान के जुल्मों से आजादी प्राप्त की थी। रामायण एवं महाभारत इतिहास के ग्रन्थ हैं। यह भी धर्म व देश रक्षा के लिये युद्ध व वर्तमान में आन्दोलन करने की प्रेरणा देते हैं। अतः आर्यसमाज ने देश को आजाद कराने के लिये न केवल अपने ग्रन्थों सत्यार्थप्रकाश एवं आर्याभिविनय आदि के माध्यम से प्रेरणा की अपितु इसके अनुयायियों ने देश की गरम व नरम धारा से जुड़ कर देश को आजाद कराने में अन्य सभी संस्थाओं से कहीं अधिक योगदान दिया है। ऋषि दयानन्द के भक्त स्वामी श्रद्धानन्द, लाला लाजपत राय, भाई परमानन्द, पं० रामप्रसाद बिस्मिल एवं शहीद भगतसिंह जी का परिवार आर्यसमाज के ही सक्रिय अनुयायी थे। सरदार पटेल भी आर्यसमाज के प्रशंसक थे। उन्होंने हैदराबाद में आर्यसमाज द्वारा किये गये आर्य सत्याग्रह को हैदराबाद रियासत के भारत में विलय को महत्वपूर्ण माना था और इसके लिए आर्यसमाज की प्रशंसा की थी।

आर्यसमाज के संस्थापक एवं इसके अनुयायियों का देश की आजादी में प्रमुख योगदान है। आजादी की ७२ वीं वर्षगाठ पर सभी देशवासियों को हार्दिक बधाई एवं शुभकामनायें।

श्रावणी उपाकर्म एवं ऋषि तर्पण

-शिवनारायण उपाध्याय

स्वामी दयानन्द सरस्वती का कथन है कि संसार में ज्ञान से अधिक मूल्यावान् दूसरा कोई पदार्थ नहीं है । इसलिए ज्ञान की प्राप्ति के लिए मनुष्य को सदैव तत्पर रहना चाहिए । राजा भर्तृहरि ने वैराग्य शतक में लिखा है-

विद्या नाम नरस्य रूपमधिकं प्रचछन्न गुप्तं धनं, विद्या भोग करी यशः सुखकरी विद्या गुरूणां गुः, विद्या बन्धु जनों विदेश गमने विद्या परा देवता, विद्या राजसु पूज्यते न हु धनं विद्या विहीनः पशु,

अर्थ - विद्या ही मनुष्य का श्रेष्ठ स्वरूप है । छिपा हुआ सुरक्षित धन है । विद्या ही भोग और विलास को प्रदान करने वाली है । विद्या ही संसार में कीर्ति फैलाने वाली और सुख देने वाली है । विद्या गुरूओं की भी गुरू है । विदेश जाने पर विद्या ही बन्धु जनों के समान रक्षा करने वाली है । विद्या ही सर्वश्रेष्ठ देवता के समान है । राजाओं के मध्य भी विद्या की ही पूजा होती है धन की नहीं । विद्या विहीन नर तो पशु को तुल्य है । वेद विद्या का सागर है अतः वेदाध्ययन अत्यन्त आवश्यक है ।

वेदमेकसदाभ्यस्येत्तपस्तप्स्यन्द्विजोत्तमः । वेदाभ्यासो हि विप्रस्य तपः परमिहोच्यते ॥

-ऋ. २.१४१.

अर्थ-द्विजोत्तम पुरूष सर्वकाल तपश्चर्याः करता हुआ वेद का ही अभ्यास करे । इस कारण ब्राह्मण को वेदाभ्यास करना इस संसार में परम तप कहा गया है ।

वेदाध्ययन की महत्ता पर यजुर्वेद ३१.८ में कहा गया है-

वेदाहमेतं पुरुषं महान्तमादित्य वर्णं तमसः परस्तात् । नमेव विदित्वाति सृत्युमेति नान्यः पन्था विद्यतेऽयनाय ॥

मैं इस महान् पुरुष को जो सूर्य के समान प्रकाश स्वरूप, अज्ञानान्धकार से पृथक है जानता हूँ । उसको जानकर ही मनुष्य मृत्यु को जीत सकता है दूसरा कोई उपाय इसके अतिरिक्त मृत्यु को जीतने का नहीं है । इसी कारण वेदाध्ययन की महत्ता बताते हुए मनु कहते है-

योऽनधीत्त्यद्विजो वेदमन्यत्रकुरूते श्रमम् । स जीवन्ने व शूद्रत्वमाशु गच्छति सान्वया ॥

-मनु. २.१४३

जो द्विज वेद को न पढ़ कर अन्य शास्त्रों के अध्ययन में श्रम करता है वह जीवित ही अपने वंश के सहित शूद्रपन को प्राप्त हो जाता है । वेदाध्ययन का प्रारम्भ मनुष्य किसी आयु से प्रारम्भ करे । इस पर स्वामी दयानन्द अपने विश्व प्रसिद्ध ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश के तीसरे समुल्लास में लिखते हैं- 'जन्म में पांचवें वर्ष तक माता फिर छः वर्ष से आठ वर्ष तक पिता शिक्षा करें और नवें वर्ष के प्रारम्भ में द्विज अपने सन्तानों का उपनयन करके आचार्य कुल (गुरूकुल) ... में भेज दें ।'

बालकों को आचरण की शिक्षा माता-पिता उससे पूर्व ही दे देवें ।

आचारः परमो धर्मः श्रुत्युक्त स्मार्त एव च ।

वेद और स्मृतियों में कहा गया जो आचरण है वही श्रेष्ठ धर्म है ।

गर्भाष्टमेऽब्दे कुर्वीत ब्राह्मणस्योपनायनम् । गर्भेकादशेराज्ञी गर्भतु द्वादशो विशः ॥

-मनु. १.११

ब्राह्मण अपने बालक का गर्भ स्थापित के दिन से आठवें वर्ष के अन्त में उपनयन संस्कार करा कर, क्षत्रिय अपने बालक का ग्यारहवें वर्ष के उपरान्त तथा वैश्व अपने बालक का बारहवें वर्ष के उपरान्त गुरूकुल में प्रवेश दिला दें । वैदिक संस्कृति में संस्कारों का बड़ा महत्व है । गुरुकुल में वेद का अध्ययन करने से पूर्व उपनयन संस्कार आवश्यक है । कहा जाता है-

जन्मना जायते शूद्र संस्कारात् द्विज उच्यते ।

जन्म काल से तो सभी शूद्र होते हैं संस्कार-होने पर द्विज बनते हैं । गुरूकुलों में श्रवण मास की पूर्णिमा के दिन गुरूकुल में प्रवेश लेने वाले बालकों का उपाकर्म संस्कार होता था । उन्हें यज्ञोपवीत पहनाया जाता था । बिना यज्ञोपवीत व्यक्ति कोवेदाध्ययन का अधिकार नहीं होता था । लोग दूर-दूर से अपने बालकों को लेकर गुरूकुल में आते थे । फिर गुरूकुल में एक बृहद यज्ञ का अयोजन होता था । यज्ञ में भाग लेने के लिए दूर-दूर से विद्वत्गण, सन्यासी, धनिक लोग, राजा-महाराजा भी उत्साहपूर्वक आते थे । उपाकर्म संस्कार के उपरान्त विद्वान् सन्यासियों, गुरूकुल के आचार्यों आदि के आध्यात्मिक विषयों पर उपदेश होते थे । संस्कारों की महता प्रतिपादित की जाती थी । श्रेष्ठीगण, सामन्तगण आदि गुरूकुलों को दान भी देते थे । उपाकर्म के बाद क्या होता था ? इस पर अथर्ववेद का कथन है-

उपनीय गुरूः शिष्यं शिक्षयेच्छौचमादितः । आचारमग्नि कार्यं न सन्ध्योपासनमेव च ॥

-मनु. २.४४

गुरू शिष्य का यज्ञोपवीत संस्कार करके पहले स्वच्छता से रहने की विधि, सदाचरण और सद्व्यवहार, अग्नि होत्र की विधि और सन्ध्या उपासना की विधि सिखायें ।

अथर्ववेद में बताया गया है कि उपाकर्म के बाद क्या होता है ?

आचार्य उपनयमानो ब्रह्मचारिणं कृणुते गर्भमन्तः । तं रात्रोस्तिस्त्र उदरे विभर्ति तं जातं द्रष्टुमुमभिसं यन्ति देवाः ॥

-अथर्व. ११.५०.१

आचार्य ब्रह्मचारी को प्रतिज्ञापूर्वक समीप रखकर तीन रात्रि पर्यन्त मन्ध्योपासनादि की शिक्षा कर उसके आत्माके अन्दर गर्भरूप विद्या स्थापन करने के लिए उसको पूर्ण विद्वान् कर देता और जब वह पूर्ण ब्रह्मचर्य और विद्या को पूर्ण करके घर पर आता है तब उसको देखने के लिए सब विद्वान् लोग सम्मुख जाकर उसका बड़ा सम्मान करते हैं ।

ब्रह्मचारी की अपने से बड़ों का सम्मान करने की सिक्षा दी जाती है ।

अभिवादन शीलस्य नित्यं बृद्धोपसेविनः । चत्वारि तस्य वर्धन्ते आयुर्विद्यायशो बलम् ॥

-मनु. २.९६

अर्थ- अभिवादन करने का जिसका स्वभाव और विद्या अवस्था में वृद्ध पुरुषों का जो नित्य सेवन करता है उसकी आयु विद्या कीर्ति और बल इन चारों की निरन्तर वृद्धि हुआ करती है । ब्रह्मचारी को बताया जाता है कि वेद, अग्निहोत्र आदि में कभी भी अनध्याय नहीं होता है अर्थात् ये नित्य कर्म हैं ।

वेदोपकरणे चैव स्वाध्याये चैव न्यैत्यके । नानुरोधोऽस्त्यनध्याये होम मन्त्रेषु चैव हि ॥

-मनु. २.८०

अर्थ वेद के पठन पाठन में ओर नित्य कर्म में आने वाले जप अथवा संध्योपासना में तथा यज्ञ करने में अनध्याय का विचार नहीं होता ।

समावर्तन संस्कार होने तक होमादि कर्त्तव्य करने पर कहा गया है-

अग्नीन्धनं भैक्षचर्यामधः शय्यां गुरोहितम्। आसमावर्तनात्कृ तोपनयनो द्विजः ॥

-मनु. २.८३

यज्ञोपवीत संस्कार में दीक्षित द्विज अग्नि होत्र करना, भिक्षा वृत्ति करना, भूमि में शयन, गुरू की सेवा समावर्तन संस्कार तक करता रहे ।. वेदाभ्ययन का पहला सत्र श्रावण मास की पूर्णिमा से उपाकर्म के साथ प्रारम्भ होकर पौष कृष्ण अमावस्या को समाप्त होता था । कालान्तर में समावर्तन संस्कार भी इस दिन होना प्रारम्भ हो गया, इसलिए जिन ब्रह्मचारियों का वेदाध्ययन समाप्त हो जाता था, उनके माता-पिता आदि भी इस दिन उत्सव में आने लगे । इससे पर्व क दिव्यता द्विगुणित हो गई ।

चिरकाल के बाद वेद के पठन-पाठन का प्रचार न्यून हो जाने पर साढ़े चार मास तक नित्य वेद-पारायण की परिपाटी लुप्त हो गई और जनता प्राचीन उपाकर्म और उत्सर्जन के स्मारक के रूप में श्रावण शुक्ला पूर्णिमा के दिन उपाकर्म और उत्सर्जन कर्म साथ-साथ ही करने लग गई । बाद में इसी कर्म को ऋषि तर्पण कहा जाने लगा । इस अवसर पर ही लोग अपने यज्ञोपवीत भी बदलवे लग गए । आचार्य वैद्यनाथ शास्त्री के अनुसार ऋषि तर्पण यज्ञ में सम्मिलित होने के चिन्ह् स्वरूप याजक और यजमानों के दाहिने हाथ में रक्षा सूत्र (रक्षा बन्धन) भी बांधे जाते हों और वर्तमान काल में रक्षा बन्धन का यही स्त्रोत हों ।

राजपूत काल में जब देश पर मुस्लिम आक्रमणकारियों के हमले होने लगे और आक्रमणकारी लोग महिलाओं को भी लूट का माल समझने लगे तब जौहर की क्रिया प्रारम्भ हुई, साथ ही अबला महिलाओं ने वीरों के दाहिने हाथ में रक्षा सूत्र बांधकर उनको भाई समान मान कर अपनी रक्षा की व्यवस्था की । इसी समय से बहिनों द्वारा भाईयों के हाथ में रक्षा बन्धन बांधने की प्रथा भी प्रारम्भ हो गई और इस पर्व को रक्षा बन्धन पर्व के नाम से जाना जाने लगा । इस पर्व का वेदाध्ययन से सीधा सम्बन्ध है । श्रावणी उपाकर्म मनाने का एक मात्र उद्देश्य यह है कि इस दिन से हम वेदाध्ययन प्रारम्भ कर दें । आर्य पर्व पद्धत्ति में सांकेतिक रूप से चारों वेदों के प्रथम तथा अन्तिम मंत्र देकर उन्हें पढ़न की प्रेरणा दी गई है ।

अब इस विषय को यहीं विराम देकर ऋग्वेद में इस पर्व के विषय में परोक्ष रूप से जो कुछ कहा गया है उसका पाठकों को परिचय दे रहा हूँ । सबसे अत्यन्त महत्वपूर्ण बात ती यह है कि वेद में शिक्षा सभी के लिए है । ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र, चाण्डाल स्त्रियां आदि सम्पूर्ण मानव समाज के लिए वेद का अध्ययन निर्बाध रूप से खुला हुआ है । यजुर्वेद अभ्यास २० मंत्र २ में स्पष्ट कहा गया है-

यथेमां वाचं कल्याणीभावदानी जनेभ्यः । ब्रह्मराजन्यभ्यां शूद्राय चार्याय स्वाय चारणाय च ।

अर्थ-परेश्वर कहा है कि (यथा) जैसे मैं (जनेभ्यः) मनुष मात्रा के लिए (इमाम्) इस (कल्याणीम्) सबका कल्याण करने वाली और मुक्ति का सुख देने वाली (वाचम्) ऋवेदादि चारों वेदों की वाणी का (आ वदानि) उपदेश करता हूँ । इस वेद वाणी का उपदेश ब्राह्मण, क्षत्रिय, शूद्र, वैश्य, सेवक, स्त्री और चाण्डाल तक तुम भी वैसे ही किया करो ।

यह वर्षा ऋतु के मध्य में मनाया जाने वाला पर्व है । ऋग्वेद मण्डल ७ सूक्त १०३ से इस पर्व को मनाने की प्रेरणा प्राप्त हुई है । पांठकों के लिए हम संक्षेप में ऋग्वेद में दिये गये विवरण से परिचित कर रहे हैं ।

दिव्या आपो अभि यदेन मायन्दृतिं शुष्कं सरसी शयानम् । गवामह न मन्युर्वत्सि नीनां मण्डूकानां वग्नूरत्रा समेति ॥-ऋ ७.१०३.२

भावार्थ-इस ऋचा में यह दर्शाया गया है कि वर्षा ऋतु के साथ मेंढक आदि जीवों का ऐसा घनिष्ट सम्बन्ध है कि जैसा इन्द्रियों का इन्द्रियों की वृत्ति के साथ होता है । जैसे इन्द्रियों की यथार्थ ज्ञानरूप प्रमादि वृत्तियां इन्द्रियों का मण्डन करती हैं इसी प्रकार से ये मेंढक वर्षा ऋतु का मण्डन करते हैं । दूसरी बात इस ऋचा से यह भी स्पष्ट होती है कि मण्डूकादि का जन्म प्रारम्भ में अमैथुनी होता है । प्रकृति रूप बीज से ही ये उत्पन्न हो जाते हैं परन्तु इसके बाद मैथुन से ही आगे उत्पत्ति क्रम चलता है ।

यदिमेनां उशतो अभ्यवर्षीतृप्यावतः प्रावृष्यागतायाम् । अखवलीकृत्या पितरं न पुत्रो अन्यो अन्यमुप वदन्तमेति ॥३॥

भावार्थ- वर्षा में ये जीव ऐसे आनन्द से विचरते हैं और अपने भावों को अपनी चेष्टा तथा वाणियों से दर्शाते हुए पुत्रों के समान अपने वृद्ध पितरों को पास जाते हैं । इसमें यह शिक्षा भी दी है कि जैसे क्षुद्र जीव जन्तु भी अपने वृद्धों के पास जाकर अपने भाव व्यक्त करते हैं वैसे हमें भी अपने वृद्धों के पास अपने भावों को प्रकट करना चाहिए ।

अन्यों अन्यमनु गृष्णात्येनोरपां प्रसर्गेसदमं दिशाताम् । मण्डूको पदभिवृष्टः कनिष्क न्यृशिनः संपृक्ते हरितेन वाचम् ॥४॥

भावार्थ- परमात्मा उपदेश करते हैं कि हे जीवों । तुम प्रकृति सिद्ध वर्षा आदि ऋतुओं में नूतन-नूतन भावों के ग्रहण करने वाले जल जन्तुओं से शिक्षा प्राप्त करो कि वे जिस प्रकार हर्षित होकर उद्योगी बनते हैं वैसे ही तुम भी उद्योगी बनो ।

यदोशामन्यो अन्यस्य वाचं शाक्तस्येन वदति शिक्षमाणः । सर्वतदेषां समृधेव पर्व यत्सुवाचो वदथनाध्यप्सु ॥५॥

भावार्थ- परमात्मा उपदेश करते हैं कि जिस प्रकार जल जन्तु भी एक दूसरे की चेष्टा से शिक्षा लाभ करते हैं और एक ही भाषा सीखते हैं वैसे तुम भी परस्पर मिलकर शिक्षा लाभ लेते हुए एक प्रकार की भाषा मे बातचीत किया करो ।

गोमायुरेको अजमायुरेकः पृश्निरेको हस्ति एक एषाम् । समानं नाम विभ्रतो विरूपाः पुरुत्रावाचं पिपि शुर्वदन्तः ॥६॥

भावार्थ- परमात्मा उपदेश करते है कि जिस प्रकार जन्तु भी स्वर भेद, आकारभेद और वर्ण भेद रखते हुए जाति भेद और वाणी भेद नहीं रखते हैं इसी प्रकार से हे मनुष्यों । तुम प्राकृत जीवों से शिक्षा लेकर वाणी और जाति का एकत्व दृढ़ करो ।

अब एक ऋचा और देकर विषय को विराम देंगे ।

ब्राह्मणासो अतिरात्रे न सोमे सरोन पूर्वमभितो वदन्तः । संवत्सरस्य तदहः परष्ठि यनमण्डूकाः प्रावृणीणं बभूव ॥७॥

इस ऋचा में परमात्मा ने वैदिकोत्सव मनाने का उपदेश दिया है । कहा है कि मनुष्यों तुम वर्षा ऋतु में प्रकृति के मनमोहक दृश्य को देख कर वैदिक सूक्तों से उपासना करो ।

आर्य समाज ने परमात्मा के इस संदेश को ठीक से समझ कर वर्षा ऋतु के ठीक ध्य में श्रावण शुक्ला पूर्णिमा को श्रावणी उपाकर्म मना कर फिर एक सप्ताह वेद प्रचार के लिए नियत कर दिया है ।

देश को प्लास्टिक मुक्त बनाना ज्यादा जरूरी

हर साल ६० लाख टन पैदा होता है प्लास्टिक का कचरा और इस उद्योग को दोगुना करने के इरादे

-डॉ. वेद प्रताप वैदिक

देश के प्लास्टिक उद्योग की ओर से हाल ही में बयान आया कि वह देश में प्लास्टिक उद्योग को दोगुना करना चाहते हैं ताकि इस क्षेत्र में रोजगार बढ़ाया जा सके। जिस उद्योग को उत्तरोत्तर घटाने की जरूरत है, वहाँ ऐसा इरादा चिन्ता पैदा करता है। प्लास्टिक मनुष्य जाति के लिए कितना खतरनाक हो सकता है, इसकी कल्पना अब से ५०-६० साल पहले किसी को नहीं थी। उस जमाने में प्लास्टिक के खिलौने बनते थे, बड़े-बड़े ढोल और टंकियाँ बनने लगी थी और तार, टेलीफोन व हैंडल जैसे उपकरण के साथ आज प्लास्टिक का साम्राज्य हर क्षेत्र में फैल गया है। अनुमान है कि १९५० से अब तक दुनिया में ८ अरब ३० करोड़ टन से भी अधिक प्लास्टिक का उत्पादन हो चुका है। हर साल दुनिया में ५०० अरब प्लास्टिक की थैलियाँ इस्तेमाल की जाती हैं, जबकि रोजमर्रा की प्लास्टिक की चीजों के नष्ट होने में ८०० से १००० साल तक का समय लगता है।

प्लास्टिक के गिलासों, कटोरियों, चम्मचों, बोतलों, डिब्बों, प्लेटों आदि के माध्यम से सिर्फ एक साल में किसी भी मनुष्य के शरीर मेंप्लास्टिक के ५२००० कण प्रवेश कर सकते हैं। माइक्रो प्लास्टिक के थे सूक्ष्म कण सिर्फ खाने-पीने के जरिए ही शरीर में घर नहीं करते हैं, बल्कि ये प्लास्टिक के कपड़ों, ट्यूब-टायरों, कॉन्टेक्ट लेंस, मोबाइल फोन, पेन-पेंसिलों आदि के जरिए भी मानव शरीर में अपनी जगह बना लेते हैं। लोगों को यह पता ही नहीं चलता है कि उन्हें कैंसर क्यों हो जाता है और उनके फेफड़े क्यों खराब हो जाते हैं। बच्चों के खिलौने में इस्तेमाल होने वाले प्लास्टिक में जब कई तरह के रंग-रोगन मिला दिए जाते हैं, तो वे उन मासूम बच्चों को भी गंभीर बीमारियों का शिकार बना देते हैं। यूरोप और जापान में इस तरह के खिलौनों पर पूर्ण परितिबन्ध है।

इससे भी ज्यादा खतरा प्लास्टिक के कचरे से पैदा होता है, जो इतना ज्यादा फैल गया है कि पूरे पृथ्वी-मंडल के चारों तरफ कम से कम चार बार लपेटा जा सकता है। सारी दुनिया में प्लास्टिक की जितनी भी चीजें बनती हैं, उनमें से ज्यादा ऐसी हैं, जो सिर्फ एक बार ही इस्तेमाल होती हैं। आपके पास कांच, पीतल या स्टील का गिलास हो तो उसे आप कई वर्षों तक इस्तेमाल करते हैं, लेकिन प्लास्टिक के गिलास मेंपानी पीकर उसे फेंक देते हैं। भारत में इस तरह का प्लास्टिकका कचरा रोज २ हजार टन से भी ज्यादा इकट्टा हो जाता है।

प्लास्टिक के इस कचरे में हमारे समुद्र, नदियाँ, तालाब और कुएं पटे जा रहे है। एक रिपोर्ट के अनुसार हमारे समुद्र में प्लास्टिक के ५००० अरब टुकड़े तैर रहे हैं। ये टुकड़े समुद्री जीवों के पेट में जाकर उनकी मौत का कारण बनते हैं। जंगलों में फैला प्लास्टिक कचरा पशुओं और पक्षियों की जान तो ले ही लेता है, वह पेड़-पौधों और वनस्पतियों को भी हानि पहुंचाता है।प्लास्टिक जलाने से जो जहरीली हवा बनती है, उससे भीपानी विषाक्त हो जाता है, हमें सांस लेने में कठिनाई होती है।

जो प्लास्टिक अब से ६०-७० साल पहले मुष्य जाति के लिए वरदान कीतरह पृथ्वी पर उतरा था, वह अब अभिशाप बन गया है। प्लास्टिक के इस्तेमाल के कारण सैकड़ों वर्षो से चली आ रही रोजमर्रा के इस्तेमाल की चीजें नदारद हो गई हैं। अब मिट्टी के कुल्हड़ों में पानी कौन पीता है, पत्तलों पर खाना कौन खाता है, जूट की चटाइयाँ कौन बिछाता है, लकड़ी की कलमों से कौन लिखता है, अचार और मुरब्बों के लिए चीनी, कांच और मिट्टी के मर्तबान कौन रखता है, बाजार जाते वक्त किसके हाथ में कपड़े की थैली होती है ? अब हमारे लाखों दर्जियों, कुम्हारों, सुतारों के पेट पर लात मारकर हमने प्लास्टिक उद्योग का महाराक्षस खड़ा कर दिया है, जो आज सवा दो लाख करोड़ रुपए तक पहुँच गया है। उसमें ४५ लाख लोग लगे हुए हैं। प्लास्टिक उद्योग पर अगर पूर्ण प्रतिबंध लगा दिया गया तो इतने लोगों के रोजगार का क्या होगा ? ४५ लाख लोग एकाएक बोरेजगार हो जाएं, ऐसा काम कोई सरकार क्यों करना चाहेगी ? लेकिन ऐसे फैसले तो तुरंत करने ही चाहिए, जिससे प्लास्टिक उद्योग से पैदा होने वाली भयंकर बीमारियाँ, जहरीले प्रदूषण और पर्यावरण के विनाश को रोका जा सके। सरकार चाहे तो प्लास्टिक से बनी उस हर चीज पर प्रतिबंध लगा सकती है, जो लोगों के खाने-पीने, पहनने-ओढने, सांस लेने आदि में इस्तेमाल होती है। कई क्षेत्र ऐसे हैं, जिनमें प्लास्टिक का यथोचित इस्तेमाल हो सकता है। यदि प्रतिबंध के कारण कुछ रोजगार छिनेंगे तो हमारे लाखों कुम्हारों, कसेरों, दर्जियों, सुतारों, लुहारों को नया रोजगार मिलेगा। मुनाफाखोरी भी घटेगी।

दुनिया के लगभग ४० देशों ने प्लास्टिक के खतरे को भांप लिया है। उन्होंने प्लास्टिक के उपयोग पर प्रतिबंध लगा दिया है। केन्या में तो प्लास्टिक की थैलियाँ यदि कोई बेचे या इस्तेमाल करे तो उसे चार साल की कैद और ४० हजार डॉलर जुर्माना भरना पड़ सकता है। फ्रांस, चीन, इटली और रवांडा जैसे देशों में प्लास्टिक पर पूर्ण प्रतिबंध है। भारत इस मामले में काफी ठीला है। हमारे कुछ राज्यों ने प्रतिबंध लगाने की घोषणा तो कर दी है, लेकिन उसे वे सख्ती से लागू नहीं कर रहे हैं। भारत में आज हर व्यक्ति साल भर में लगभग २०० प्लास्टिक की थैलियों का इस्तेमाल करके उन्हें कूड़े में फेंक देता है। देश में हर साल लगभग ६० लाख टन प्लास्टिक कूड़ा पैदा होता है। बड़े शहरों में इस कूड़े की भरमार है। हमारे केन्द्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड के अनुसार दिल्ली में ६९० टन, चेन्नई में ४२९ टन, कोलकाता में ४२६ टन और मुंबई में ४०८ टन प्लास्टिक कचरा रोज पैदा होता है।

यदि प्लास्टिक के इस खतरे से देश को बचाना है तो सिर्फ प्रतिबंध की घोषणाओं से कुछ नहीं होगा। इनके साथ-साथ प्लास्टिक की थैलियाँ, प्लेटें, ग्लास, चम्मच, कटोरियाँ और बर्तन बनाने वालों पर लाखों रुपए का जुर्माना हो और हल्की-फुल्की सजा भी हो, यह भी जरूरी है। इस प्रतिबंध के कारण जो कारखाने बंद हों और जो मजदूर बेरोजगार हों, उनकी समुचित देखभाल की व्यवस्था भी सरकार करे। इन सबसे भी ज्यादा जरूरी है कि हमारे देश के राजनीतिक दल अपने करोड़ों कार्यकर्ताओं से प्लास्टिक के बर्तनों के बहिष्कार का संकल्प करवाएं। इस बहिष्कार के पक्ष में जबर्दस्त जन-आंदोलन चलाएं। देश के साधु-संत, मौलवी-पादरी, समाजसेवी-सुधारक लोग भी प्लास्टिक के खतरों से लोगों को जागरूक करने का अभियान चलाएं। इस देश को किसी विचारधारा, किसी व्यक्ति, किसी नेता या पार्टी से मुक्त कराने की बजाय प्लास्टिक से मुक्त कराना ज्यादा जरूरी है।

दलित उत्पीड़न से उठते सवाल

स्वामी अग्निवेश

दलित उत्पीड़न की आपराधिक-हिंसक घटनाएं संविधान और कानून का मखौल तो हैं ही, साथ ही ये बताती हैं कि हम आज भी जाति, वर्ण और लिंग के भेदभाव वाले समाज में रह रहे हैं। लेकिन गंभीरता से अध्ययन करने पर यह सामने आता है कि दलितों के साथ अपराध, हिंसा और अपमानजनक व्यवहार करने के पीछे मकसद कानून तोड़ना नहीं होता है। इसका कारण हमारे सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक और राजनीतिक ढांचे में निहित है।

आजादी के सात दशक बाद भी देश में दलितों का उत्पीड़न बंद नहीं हुआ है। समाचार पत्रों के माध्यम से आए दिन दलित उत्पीड़न की घटनाएं सामने आती रहती हैं। दलितों के साथ घटित आपराधिक घटनाएं कुछ दिन मीडिया की सुर्खियां बनने के बाद गायब हो जाती हैं। यही हाल गुजरात के बोताद में एक दलित उप सरपंच मांजीभाई सोलंकी की हत्या के बाद भी हुआ। मीडिया अब खामोश है और मांजीभाई के परिजन न्याय की आस में हैं, जो शायद ही उन्हें मिलेगा। यहां यह देखना दिलचस्प है कि मांजीभाई कोई आम नागरिक नहीं थे। पिछले बी:: साल से उनके परिवार के लोग गांव के सरपंच चुने जा रहे हैं। अभी मांजीभाई की पत्नी सरपंच हैं और वे उप सरपंच थे। यह कहा जा सकता है कि गांव में उनकी अच्छी पकड़ थी। लेकिन उनके गांव के उच्च जाति के लोगों को दलित समुदाय के व्यक्ति का सरपंच चुना जाना अच्छा नहीं लग रहा था। पहले उनको धमकियां मिलती रहीं, फिर हमला कर जान से मार दिया गया।

गुजरात में यह कोई पहली घटना नहीं है। पिछले एक महीने में यह तीसरी घटना है जिसमें किसी दलित को अपनी जान गंवानी पड़ी। सिर्फ गुजरात नहीं, देश भर में दलितों का उत्पीड़न बढ़ता जा रहा है। आज इक्कीसवीं सदी में भी दलितों की हत्या, बलात्कार और जातीय उत्पीड़न की घटनाओं में कमी नहीं देखी जा रही है। पिछले एक दशक की बात करें तो दलित समुदाय को बहुत ही विकट हालात का सामना करना पड़ा है। सरकारी आंकड़े भी इस बात की पुष्टि करते हैं। नेशनल क्राइम रिकॉर्ड ब्यूरो (एनसीआरबी) के आंकड़ों के मुताबिक पिछले दस साल (2007-2017) में दलित उत्पीड़न के मामलों में छियासठ फीसद का इजाफा हुआ है। इस दौरान देश में रोजाना छह दलित महिलाओं से बलात्कार के मामले दर्ज किए गए। आंकड़ों के मुताबिक भारत में हर पंद्रह मिनट में एक दलित के साथ कोई आपराधिक घटना घट रही है।

देश में दलितों के साथ घट रही आपराधिक और हिंसक घटनाओं को सिर्फ कानून-व्यवस्था के पहलू से देखना सही नहीं होगा। दलित उत्पीड़न की आपराधिक-हिंसक घटनाएं संविधान और कानून का मखौल तो हैं ही, साथ ही ये बताती हैं कि हम आज भी जाति, वर्ण और लिंग के भेदभाव वाले समाज में रह रहे हैं। लेकिन गंभीरता से अध्ययन करने पर यह सामने आता है कि दलितों के साथ अपराध, हिंसा और अपमानजनक व्यवहार करने के पीछे मकसद कानून तोड़ना नहीं होता है। इसका कारण हमारे सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक और राजनीतिक ढांचे में निहित है। सदियों से हमारे समाज में सिर्फ दलित ही नहीं, बल्कि आदिवासी और महिलाओं की स्थिति भी दोयम दर्जे की रही है। शास्त्रों में भले ही महिलाओं को देवी का दर्जा दिया गया हो, लेकिन जीवन के वास्तविक धरातल पर महिलाओं का दर्जा दलितों और शूद्रों से ऊपर नहीं था।

आजादी के बाद दलितों, आदिवासियों और महिलाओं की स्थिति में सुधार के लिए कई नियम-कानून बने। लेकिन आज तक संपूर्ण रूप से वे धरातल पर लागू नहीं हो सके। सवर्ण और पुरुष वर्चस्व वाला हमारा समाज दलितों-महिलाओं को आज भी बराबरी का दर्जा नहीं देना चाहता। पुरुष और सवर्ण वर्चस्व वाला समाज आज भी दोनों को सेवक समझता है। ऐसे में जब भी वह किसी दलित और महिला को अपने से आगे बढ़ता हुआ देखता है तो उसे यह किसी अनहोनी से कम नहीं लगती है।

ऐसा भी नहीं है कि आजादी के बाद दलितों और महिलाओं की स्थिति में सुधार नहीं हुआ है। आजादी के बाद से ही दलितों, पिछड़ों, अल्पसंख्यकों और महिलाओं के कल्याण के लिए कई योजनाएं शुरू की गई। इसका फायदा भी उन्हें हुआ है। पहले दलितों के साथ होने वाले अपराध सामने नहीं आ पाते थे। लेकिन शिक्षा और जागरूकता के बढ़ने से दलितों के साथ होने वाले अपराध अब सामने आने लगे हैं। आधुनिक शिक्षा ने दलितों को रोजगारोन्मुख बनाया है। रोजगार और राजनीतिक चेतना से दलितों के जीवन में बदलाव भी आया। राजनीतिक बदलाव से भी दलितों में चेतना का संचार हुआ है। ऐसे में पहले की तरह उनका उत्पीड़न करना आसान नहीं रह गया है फिर

भी सामाजिक-आर्थिक रूप से कमजोर होने के कारण उन पर होने वाले अपराध अभी बंद नहीं हुए हैं, बल्कि पिछले कुछ सालों में तो ज्यादा ही बढ़े हैं।

राजनीतिक चेतना से युक्त और सरकारी नौकरियों में बढ़ती भागीदारी से दलित समाज अपने अधिकारों के प्रति जागरूक हुआ है और उसके जीवनस्तर में भी बदलाव आया है। आज गांव-देहात में सवर्ण-सामंतों के खेतों में काम करने के बजाय दलित शहरों में मजदूरी करना ज्यादा पसंद करता है। ऐसे में उच्च वर्ग के लोगों को यह बुरा लगता है कि पीढ़ी दर पीढ़ी आश्रित रहने वाला आज हमारे बराबर खड़ा होने की कोशिश कैसे कर रहा है। संविधान में सबको बराबरी का अधिकार मिला है। कानून की नजरों में सब एक समान हैं, सवर्ण इस विचार से आज भी सहमत नहीं होता है। अब चूंकि दलित और महिला हमेशा सवर्णों और पुरुषों के सामने कमतर माने जाते रहे हैं, ऐसे में वह दलितों को बराबरी करते देख बौखला जाते हैं। बिना किसी वाजिब कारण के वे आज भी अपनी जायज-नाजायज मांगों को दलितों से पूरा कराना चाहते हैं। लेकिन समय के साथ आए बदलावों ने दलितों के भीतर नई चेतना का संचार किया है। अब दलित चुपचाप उत्पीड़न को सहने और गांव-घर में ही निपटाने की बजाय थाने और अदालत का रुख करता है। दलितों के इस व्यवहार से सवर्ण-सामंती ताकतें और चिढ़ती हैं और दलितों के खिलाफ अपराध बढ़ते जाते हैं। ऐसे में देश के तमाम हिस्सों में रोज दलितों के साथ हिंसा की घटनाएं सामने आ रही हैं।

पिछले पांच वर्षों का आंकड़ा देखें तो दलितों और आदिवासियों पर हमले बढ़े हैं। लेकिन कुछ दिनों पहले देश में दलित उत्पीड़न नहीं, बल्कि दलितों के हित में बने कानूनों के दुरुपयोग की चर्चा जोरों पर रही। देश भर में एक भ्रम रचा गया कि अब दलित कानून की आड़ में सवर्णों को बेवजह फंसाया जा रहा है। हाल में सुप्रीम कोर्ट का एक फैसला आया था, जिसमें एससी-एसटी एक्ट के दुरुपयोग को रेखांकित करते हुए बदलाव किए गए थे। सर्वोच्च अदालत ने कुछ अहम दिशानिर्देशों तय किए थे जिससे दलित समुदाय के किसी व्यक्ति के साथ घटित आपराधिक घटना की जांच के बाद ही मुकदमा दर्ज करने और गिरफ्तारी की बात थी। सुप्रीम कोर्ट के इस फैसले का देशव्यापी विरोध हुआ और केंद्र सरकार ने कदम पीछे खींच लिए। अदालत के फैसले के मद्देनजर केंद्र सरकार ने एक संशोधन विधेयक लाकर एससी-एक्ट को पूर्व की स्थिति में ला दिया।

ऐसे में यह सवाल उठता है कि जब देश में किसी दलित के साथ हुई आपराधिक घटना की शिकायत के बाद तुरंत एफआईआर और गिरफ्तारी का नियम है तो दलितों के साथ इतनी आपराधिक घटनाएं कैसे घट रही हैं। असली सवाल यही है। आश्चर्यजनक रूप से सत्य तो यह है कि दलितों के साथ हिंसा आदि के मामले में एफआइआर दर्ज होने का प्रतिशत बहुत ही कम है। यदि मामला दर्ज भी हो गया तो दबाव और कोर्ट-कचहरी में व्याप्त भ्रष्टाचार की वजह से दोषी को सजा मिलने का आंकड़ा बहुत ही कम है। ऐसे में दलित-आदिवासियों के हित में कानून होने के बावजूद जमीनी स्तर पर उसके सही क्रियान्वयन न हो पाने के कारण दलितों-आदिवासियों और महिलाओं के साथ होने वाले अपराध में कमी नहीं आ रही है।

सत्यार्थ प्रकाश लोकार्पण समारोह की चित्रमाला

स्वामी ब्रह्मानन्द जी का, माता निर्मला योग भारती जी का, स्वामी धर्मेश्वरानन्द जी का व डॉ. रमेशचन्द्र भटनागर जी का सम्मान करते हुए मुख्य अतिथि बण्डारू दत्तात्रेय जी व अन्य।

सत्यार्थ प्रकाश लोकार्पण समारोह की चित्रमाला

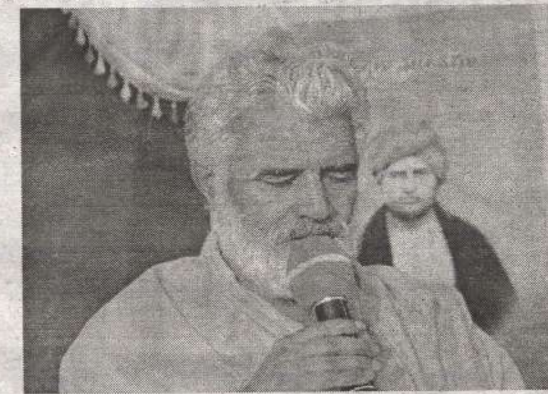

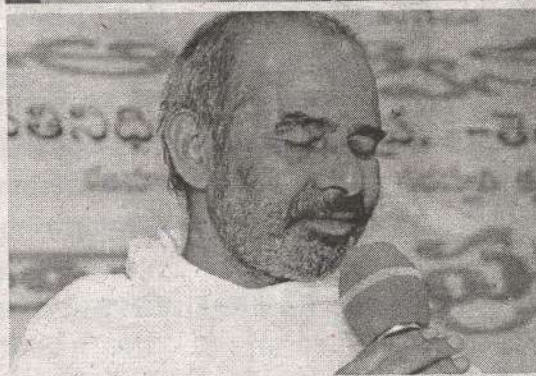

नौकरशाह-भूमाफिया गठजोड़ की करतूत

आजादी के बाद से ही हमारी सरकारें नौकरशाहों व भूमाफियायों के माध्यम से आदिवासियों को जंगल से बेदखल करके कारपोरेट को जमीन सौंपने का षडयंत्र करती आ रही हैं। ताजा घटनाक्रम ने साबित कर दिया है कि सदियों से जल-जंगल व जमीन के सहारे जीवन यापन करने वाले प्रकृति-पुत्रों की बेदखली के लिए शासन-प्रशासन किसी भी हद तक जा सकता है।

सोनभद्र-नरसंहार

-स्वामी अग्निवेश

आदिवासी समाज के प्रति हमारे शासन-प्रशासन का क्या नजरिया है, यह सोनभद्र जिले के उम्भा गांव में घटित नरसंहार से समझा जा सकता है। आदिवासी समाज शासन-सत्ता पर आश्रित होने के बजाय जंगल व जमीन के ही आसरे जीवन यापन करता रहा है। सरकार से बहुत कम उम्मीद रखने के बावजूद जनजातियों के प्रति शासन का व्यवहार अमानवीय रहा है। सोनभद्र के नरसंहार ने हमारे समाज के सामूहिक चरित्र पर सवालिया निशान लगाया है। यकीन नहीं होता कि हम 21 वीं सदी में रह रहे हैं।

अपने को विश्व का सबसे बड़ा लोकतंत्र कहने वाले देश में दिन के उजाले में दस निर्दोष आदिवासियों की हत्या कर दी गई। घटना के बाद सरकार सारा ठीकरा विपक्ष के सिर पर फोड़ने में व्यस्त है, जबकि इस गोलीकांड में घायल दो दर्जन से अधिक लोग अभी भी जिंदगी और मौत के बीच झूल रहे हैं। उत्तर प्रदेश सरकार इस घटना का दोष पूर्व सरकारों के मत्थे मढ़ रही है, लेकिन दोष चाहे जिसका हो, यह घटना समूचे मानवता के रोंगटे खड़े करने के लिए काफी है। हमें ऐसी घटनाओं को रोकने और उनके कारणों का निदान करने की जरूरत है।

यह नरसंहार आदिवासियों पर होने वाले जुल्म की पूरी तस्वीर नहीं है। पूरी तस्वीर बहुत ही भयावह है। अफसोस इस बात का है कि आदिवासियों पर रोज बेइंतहा जुल्म ढाए जा रहे हैं। उनके साथ जुल्म-ज्यादती और अन्याय समूचे देश में आम बात है। उनकी जमीनों पर जबरन कब्जा करना या उन्हें नक्सली बताकर गोलियों से भून देने का सिलसिला कई दशकों से जारी है। अभी हाल ही में मध्य प्रदेश के सीहोर जिले के बारेला समाज के आदिवासियों को जबरन उनके जमीन से बेदखल करने का प्रयास किया गया। भारी विरोध के बाद सरकार को अपना फैसला वापस लेना पड़ा।

छत्तीसगढ़ और झारखंड तो आदिवासियों के उत्पीड़न का प्रयोगशाला ही बन गये हैं। यह अजब संयोग है कि आदिवासी समाज की जहां-जहां बसावट है, वहां प्रकृति की विशेष अनुकंपा है। मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़, झारखंड और यूपी-बिहार के जिन हिस्सों में आदिवासियों की आबादी है, वहां खनिज और वन संपदा पर्याप्त मात्रा में हैं। आदिवासी वन संपदा के प्राकृतिक रखवाले हैं, लेकिन आज का समूचा विकास मॉडल प्राकृतिक संपदा और खनिजों पर आश्रित है। प्राकृतिक संपदा के अंधाधुंध दोहन में आदिवासी समाज आड़े आ रहा है।

आजादी के बाद से ही हमारी सरकारें नौकरशाहों और भूमाफियायों के माध्यम से आदिवासियों को जंगल से बेदखल करके कारपोरेट को जमीन सौंपने का षडयंत्र करती आ रही हैं। ताजा घटनाक्रम ने यह साबित कर दिया है कि सदियों से जल-जंगल व जमीन के सहारे जीवन यापन करने वाले प्रकृति-पुत्रों को जंगल से बेदखल करने के लिए शासन-प्रशासन किसी हद तक जा सकता है।

अधिकारियों के माध्यम से नियम-कानून को धता बताते हुए आदिवासियों को बेदखल करने का खेल सोनभद्र में लंबे समय से चल रहा है, लेकिन इस खेल को समझने के बाद जब आदिवासी समाज ने सामूहिक एकता का परिचय दिया तो उनके सामूहिक नरसंहार को अंजाम दिया गया। पूरा मामला आदिवासियों के उपयोग में आने वाली जमीन पर अवैध कब्जा का है। इस मामले में भी आदिवासियों की पुश्तैनी कब्जा वाले जमीन पर रक्त की नदी बहाने की पटकथा एक नौकरशाह ने ही लिखी थी।

पटकथा को अमलीजामा पहनाने के लिए जरुरत थी मन-मुताबिक सरकार के सत्तारूढ़ होने की। भाजपा सरकार के आने के बाद यह आसान हो गया। पहले इस घटना की पृष्ठभूमि पर एक नजर डालते हैं। सोनभद्र जिले के घोरावल कोतवाली क्षेत्र के ग्राम पंचायत मूर्तिया के उम्भा गांव की जिस 150 बीघे जमीन पर कब्जा को लेकर खून की होली खेली गई, उसके पीछे नौकरशाह और भूमाफिया गठजोड़ है। उम्भा गांव के गोड़ आदिवासी पिछले 70 वर्ष से भी ज्यादा समय से यह खेत जोत रहे हैं। गांव के आदिवासी 1940 के पहले से ही इन जमीनों पर काबिज रहे हैं।

आजादी के बाद से ही गोड़ आदिवासी शासन-प्रशासन से गुहार लगाते रहे कि जमीन का अधिकार उन्हें दे दिया जाए। लेकिन ऐसा नहीं हुआ। सन् 1955 में इस जमीन पर एक आईएएस की निगाह पड़ी और विवाद में नया मोड़ आ गया। बिहार के एक आईएएस अधिकारी प्रभात कुमार मिश्रा ने ग्राम प्रधान और तत्कालीन तहसीलदार की मदद से उम्भा गांव की लगभग 600 बीघा जमीन को आदर्श कोआपरेटिव सोसायटी के नाम करा लिया। उसके बाद उक्त आईएएस ने पूरी जमीन को 1989 में अपने पत्नी और पुत्री के नाम करा दिया, जबकि कानूनन सोसायटी की जमीन किसी व्यक्ति के नाम नहीं हो सकती। 2010 में इसी जमीन में लगभग 150 बीघा जमीन सामूहिक नरसंहार के आरोपी यज्ञदत्त ने अपने रिश्तेदारों के नाम करा दिया। उसके बावजूद आदिवासियों का जमीन पर कब्जा बरकरार रहा, लेकिन आरोपी ने पैसे के बल पर जमीन को अपने नाम करा लिया। नामान्तरण के खिलाफ ग्रामीणों ने एआरओ के यहां शिकायत दर्ज कराई तो तत्कालीन जिलाधिकारी ने सहायक अभिलेख अधिकारी को मौके पर जाकर भौतिक सत्यापन कर यथास्थिति बनाये रखने का आदेश दिया था। लेकिन फरवरी में उक्त जिलाधिकारी के तबादले के चार दिन बाद सहायक अभिलेख अधिकारी ने आदिवासियों की मांग को अनसुना कर बेदखली का आदेश दे दिया। अंततः यही निर्णय आदिवासियों के नरसंहार का कारण बना। कागजात में नाम दर्ज होने के बाद आरोपियों ने जबरन जमीन पर कब्जा करने की तैयारी शुरू कर दी। घटना के दिन आरोपी यज्ञदत्त के नेतृत्व में 32 ट्रैक्टर ट्रालियों में तीन सौ से अधिक लोग उम्भा पहुंच गए। इसके साथ ही बोलेरो में भरकर राइफल और बंदूकधारियों को भी घटनास्थल पर लाया गया। जमीन कब्जा करने के क्रम में ग्रामीणों के विरोध के बाद मारपीट शुरू हुई तो बोलेरो पर सवार हमलावर आधे घंटे तक मौत का खेल खेलते रहे।

घटना के दो दिन पहले आदिवासियों ने प्रशासन को अपनी आशंका से अवगत कराया था, लेकिन जिला प्रशासन ने कोई कार्रवाई नहीं की। यज्ञदत्त ने इसके पहले भी उक्त जमीन पर कब्जा करने का प्रयास किया था लेकिन ग्रामीणों के विरोध के कारण वह कामयाब नहीं हो सका था।

आदिवासियों के हितों के संरक्षण के लिए संविधान की पांचवीं और छठी अनुसूची में विशेष प्रावधान किए गए हैं। इसके साथ ही पी-पेसा कानून-1996 में भी आदिवासी क्षेत्र में स्वशासन का अधिकार दिया गया और वनाधिकार अधिनियम-2006 में जंगल के उत्पाद पर आदिवासियों का हक बताया गया है। उक्त तीनों कानूनों को सही तरीके से लागू करके आदिवासियों के हितों की रक्षा की जा सकती है। सोनभद्र की घटना किसी भी सभ्य समाज के माथे पर कलंक के समान है। यह कलंक तभी मिट सकेगा जब इस मामले के दोषियों को तो सजा मिले ही, साथ ही आदिवासियों के लिए बने कानून को सही तरीके से लागू किया जाए। समाज और सरकार दोनों प्रण करें कि अब आदिवासियों के साथ इस तरह की घटना की पुनरावृत्ति नहीं होगी।

गीता का निष्काम कर्म

-प्रो. सत्यव्रत सिद्दान्तालंकार

संमोहात स्मृतिनिभूतः समोह की अवस्था आने पर स्मृतिविभ्रम हो जाता है । संमोह की अवस्था आने पर मनुष्य दो बातों का शिकार हो जाता है- पहली बात तो यह कि संमोहावस्था में वह स्वतन्त्रता खो बैठता है, दूसरी बात यह कि वह स्मृति भी खो बैठता है । वह कैसे ?

(१) अब स्वतन्त्रता खो जाती है-पहली बात तो यह कि जहाँ 'संमोह' की अवस्था आयी, अर्थात् मनुष्य कामना के प्रति इट गया, नफे-नुक्सान को भूल गया- 'अब पाकर ही रहूँगा'- यह कहने लगा, तब वह ऐसी स्थिति में आ जाता है जब अपनी स्वाभाविक स्वतन्त्रता का प्रयोग करके इस कर्म-जाल में से निकल नहीं सकता, इस में बँध जाता है । अब तक-क्रोध तक-तो वह कर्म-जाल में से निकल सकता था, संमोह में आकर वह कर्म-जाल में से नहीं निकल सकता, फंस जाता है । कर्म का बन्धन उसे अब आगे ही आगे धकेलने लगता है, वह प्रकृति-प्रदत्त स्वतन्त्रता खो बैठता है । ऐसा क्यों होता है, इसका कारण है । वह कारण क्या है ? वह संमोह की अवस्था में आकर अपनी स्वतन्त्रता क्यों खो बैठता है ? सिलिए खो बैठता है क्योंकि संमोह में उसकी स्मृति डावांडोल हो जाती है, दिमाग पर असर हो जाता है । वह कैसे ? इसको समझने के लिए 'स्मृति' के स्वरूप को समझना होगा ।

२) वह स्मृति भी खो बैठता है- 'स्मति' का रूप यह है कि जो वस्तु जैसी है, उसका शुद्धरूप मस्तिष्क में संचित हो जाए । 'संमोह' में वस्तु का शुद्ध रूप मस्तिष्क में संचित नहीं रहता । मनुष्य के भीतर जो **'राग-द्वेष'** है, वे बाह्य विषय में प्रतिबिम्वित होने लगते हैं । बाह्य विषय जैसा है, वैसा नही दीखता । मोह-ग्रस्त व्यक्ति को बाह्य विषय वैसा दीखता है जैसा उसके भीतर राग या द्वेष होता है । एक स्त्री, जिसे एक व्यक्ति देखना भी नही चाहता, दूसरा उसके लिए मरता है । क्यों मरता हैं ? स्त्री में कुछ नहीं- उसमें एक ने द्वेष-बुद्धि का आधान कर लिया, दूसरे ने राग-बुद्धि का आधान कर लिया । यथार्थ अवस्था, जिसका आधार स्मृति है, वह नही उसमें एक ने द्वेष-बुद्धि का आधान कर लया, दूसरे ने राम-बुद्धि का आधान कर लिया । यथार्थ अवस्था, जिसका आधार स्मृति है, वह नहीं रही । इसी कारण संमोह में स्मृति अपना काम करना छोड़ देती है, वह यथार्थ को, बाह्य वस्तु के असली रूप को नहीं देखती । इसी को लक्ष्य में रखकर कहा है- **'संमोहात् स्मृतिविभ्रम'** ।

अबतक मनुष्य दो रास्तों में से जिसको चाहता था, अपना सकता था, अब वह इस स्वतंत्रता को खो बैठता है ।

(छ) **स्मृतिःभ्रंशात् बुद्धि-नाशः-** 'संमोह' से 'स्मृति' नष्ट हो जाती है क्योंकि 'संमोह' के कारण जो वस्तु जैसी है, वह वैसी नहीं जान पड़ती, जो स्मृति का काम है । और, स्मृति न रहे तो बुद्धि काम नहीं करती, क्योंकि बुद्धि का सारा आधार स्मृति है । उदाहरणार्थ, बच्चे को पहाड़े रटाए जाते है । यह स्मृति का काम है । इस रटे हुए को आधार बना कर उसे गणित के सवाल दिए जाते है । अगर उसे पहाड़े याद नहीं है-स्मृति-दोष है-तो वह सवाल हल नहीं कर सकता, अर्थात् स्मृत ठीक न होने से बुद्धि काम नहीं करती । इसी को **'स्मृतिभ्रंशात् बुद्धिनाशः'** कहा गया है । हमारी स्मृति में जो कुछ संचित है, उसी को आधार बना कर बुद्धि काम करती है, ठीक वैसे ही जैसे ईंट-चूना बजरी होने पर ही मकान की दीवारें चिनी जाती हैं । स्मृति ईंट-चूना-बजरी है, बुद्धि मकान है ।

(ज) **बुद्धिनाशात् प्रणश्यति-** बुद्धि ही न रही तो नाश-ही-नाश है । गीता ने बड़े ही मनोवैज्ञानिक रूप से सकाम तथा निष्काम का विश्लेषण किया है-

ऐसा विश्लेषण जो संसार की किसी मनोविज्ञान की पुस्तक में भी नहीं मिलता ।

इन में क्रोंध तक मनुष्य अपनी स्वाभीविक स्वतंत्रता के कारण कर्मजाल में से निकल सकता है । निकलने का साधन अनासक्ति है, निष्कामता है । क्रोध के बाद आसक्ति आ जाती है, सकामता आ जाती है, क्योंकि 'संमोह' की स्टेज पर आकर वस्तु-स्थिति बदल जाती है, उसमें बाह्य वस्तु ज्ञान में नहीं रहती । 'राग द्वेष' जो भीतर की वस्तु है, संग-दोष है, सकामता है-वह आ जात है, इसलिए संमोह की स्टेज पर आने के बाद मनुष्य अपने जाल में ही बंध जाता है-ठीक ऐसे जैसे मकड़ी अपने ही जाल में फँस कर मर जाती है । अपना रागद्वेष ही अपना जाल है जिसमें से निकलना कठिन हो जाता है ।

८ सकामता से पतन का वर्णन करने के बाद गीता में निष्कामता से उत्थान का मनोवैज्ञानिक वर्णन भी किया गया है जो इस प्रकार है :

उत्थान का क्रम

राग-द्वेष-वियुक्तैस्तु विषयानिग्दियैश्चरन् । आत्मवशैविधेयात्मा प्रसादमधिगच्छति ।। प्रसादे सर्वदुः खाना हानिरस्योपजायते । प्रसन्नतेतसो हगशु बुदि्धः पर्यवतिष्ठते ।। (२-६४-६५)

हम पहले लिख आए हैं कि पतन की तरफ चलते हुए मनुष्य पहले विषयों का ध्यान करने लगता है, फिर उनका संग, फिर उनके प्रति चाह-कामना-फिर कामना पूरी न होने से क्रोध और क्रोध के बाद संमोह हो जाता है । सम्मोहावस्था तब आती है जब बाह्य-वस्तु का जो रूप है वह सामने न रहकर उसमें अपने भीतर का राग-द्वेष-आसक्ति-झलकने लगती है । यह पतन का क्रम है । इस क्रम को कहीं भी तोड़ी जा सकता है, परन्तु सम्मोह क अवस्था आ जाने पर इसे नहीं तोड़ा जा सकता । उत्थान का क्रम पतन के क्रम से उलटा है । गीता के उक्त दो श्लोकों में मनुष्य को, अगर वह गिरता-गिरता राग-द्वेष तक पहुँच गया है, तो वहाँ से पीछे लौट जाने को कहा गया है- **'राग-द्वेष वियुक्त'** हो जाने को कहा गया है । **'संमोह'** की अवस्था को न आने देना ही उत्थान के मार्ग पर चल देना है । जब हम राग और द्वेष-अपना प्रतिबिम्ब-बाह्य वस्तु में न डालेंगे, तब 'समोह' की अवस्था नहीं आएगी, आसक्ति-कामना-नही होगी । आसक्ति के न रहने से संग, संग न रहने से ध्यान नही रहेगा और पतन की सारी श्रृंखला टूट जायगी । राग-द्वेष न रहने से चहाँ पीछे की सारी श्रृंखला टूटेगी, वहाँ

पतन की आगे की श्रृंखला बनने नहीं पाएगी। संमोह नही बना तो स्मृति विभ्रम-स्मृति-भ्रंश-नहीं होगा, स्मृति बनी रहेगी, स्मृति बने रहने से 'बुद्धिः पर्यवतिष्ठते' बुद्धि बनी रहेगी, बुद्धि बनी रहेगी तो मनुष्य इन्द्रियों से संसार के विषयों में विचरता हुआ 'आत्मवश्य' रहेगा-इन्द्रियों को अपने वश में रखेगा, इन्द्रियों के वश में नहीं भटकता फिरेगा, उसके दुःखों की हानि ही जायगी, प्रसन्न-चित्त- 'प्रसन्न चेतसो ह्याशु' रहेगा। गीता ने जैसे पतन का क्रम ६२-६३-इन दो श्लोकों में बतलाया, वैसे उत्थान का क्रम ६५-६५ इन दो श्लोकों में बतला दिया है।

६) **अनासक्तिवाद तथा मनोविश्लेषणवाद में भेद**-गीता का सारा दृष्टिकोण कामना का, आसक्ति का, वासना का नाश करना है। इसे 'अनासक्तिवाद' कहा जा सकता है। यहाँ पर वर्तमान मनोविज्ञान-**मनोविश्लेषणवाद**-के साथ गीता काटकराव हो जाता है। वह कैसे ?

फ्रॉयड के मनोविश्लेषणवाद का कहना है कि वासना-कामना, इच्छा-के क्रियान्वित होने से ही वासना मिटती है, अन्यथा उसके पूरान होने से मन में विक्षोभवना रहता है। इसे वे 'टेंशन' (Tension) कहते है। टेंशन से, वे कहते है 'कॉम्पलेक्स' (Complexes) बन जाते है। गीता के मनोविज्ञान का कहना इससे भिन्न है।भारतीय मनोविज्ञान या गीता के मनोविज्ञान का कहना है कि जब वासना को तृप्त किया जाता है, तब वह मिटती नाही, कुछ देर के लिए दब जाती या शान्त हो जाती है, परन्तु अपने संस्कार अमिट रूप से पीछे छोड़ जाती या शान्त हो जाती है, परन्तु अपने संस्कार अमिट रूप से पीछे छोड़ जाती है जिसके परिणामस्वरूप फिर वही वासना जजाय उठती है। इस प्रकार वासना का चक चलता ही चला जाता है, रूकता नही। इसलिए मनोविश्लेषणवादी पाश्चात्य समाधान उपयुक्त नहीं है।

भारतीय सांस्कृतिक दृटिकोण या गीता का दृष्टिकोण यह है कि कामनाएँ तथा वासनाएँ भोगने से मिटती नही। यहाँ का दृष्टिकोण है:

क) **भोग : न भुक्ताः वयमेव भुक्ताः तृष्णा न जीर्णा वयमेव जीर्णाः।**

ख) **हविषा कृष्णवत्मेंव भूय एवाभिवर्धते।**

अर्थात् विषयों का भोग लेने से तृष्णा मिटती नही, हम ही मिट जाते हैं। भोगों को भोगना ऐसा ही है जैसे अग्नि में घृत की आहुति दे दी जाय। इससे अग्नि प्रचण्ड हो उठती है, ज्वालाएँ लपलपाने लगती है। शान्त नहीं होती।

१०) **अनुभव क्या बतलाता है-** अनुभव यह भी बतलाता है कि वासना भोग लेने से वह शान्त हो जाती है- यह मनोविश्लेषणवादी दृष्टिकोण ठीक है, अनुभव यह भी बतलाता है, कि वासना भोग लेने के बाद फिर जाग उठती है क्योंकि वासना का संस्कार बना रहता है- यह भी ठीक है। इसलिए इन दोनों दृष्टिकोणों के अलावा गीता का एक तीसरा दृष्टिकोण है जिसमें दोनों का समन्वय है। समन्वयात्मक दृष्टिकोण क्या है ?

क) निष्काम कर्म या अनासक्ति-योग गीता का मार्ग है : गोता का समन्वयात्म दृष्टिकोण है- गीता का कहना है कि वासना न भोगने से नष्ट होती है, न त्यागने से नष्ट होती है। जैसे दीये की रोशनी सूर्य की रोशनी से समाप्त हो जाती है, वैसे ही जो विचार हमारे भीतर है, उनसे अधिक ऊँचे विचारों से वासना नही रहती। वासना स्वार्थमय, आसक्ति के विचारों से बनती है, अनासक्ति के विचारों से वह नही बनती। जितना गहरा स्वार्थ होगा, उतनी गहरी आसक्ति होगी, उतनी गहरी वासना होगी, उतना गहरा संस्कार पड़ेगा-इसलिए वह संस्कार रड़कता रहेगा, शान्ति नहीं मिलेगी, यो तो स्वार्थहीन, वासाहीन, आसक्तिहीन, निष्काम जीवन बिताओ, या कोई ऊँची आसक्ति का जीवन बिताओ। ऊँची आसक्ति है- परमात्मा का स्मरण या मानव-समाज की निःस्वार्थ सेवा। निःस्वार्थ सेवा में कोई आसक्ति नहीं-शान्ति-ही-शान्ति है, प्रसादमय जीवन है। इसी को गीता में 'प्रसादमधिगच्छति' कहा है।

ख) **यज्ञमय जीवन ही अनासक्ति-योग या निष्काम कर्म है-**इसका यह अर्थ नही है कि अपना कोई काम नहीं करना-समाज-सेवा का ही काम करना। अपना काम करो किन्तु तुम तो अकेले कुछ नहीं हो, समाज के अंग हो। अपने लिए करने के बाद जो धन या शक्ति बच रहे, वह समाज के अर्पण कर दो। गीता ने इसी को 'यज्ञ' कहा है। गीता में लिखा है :

यज्ञार्यात् कर्मणोऽन्यपलोकोयं कर्मबन्धनः।
तदर्थ कर्म कौन्तैय मुक्तसंगः समाचार।

(३-६)

यज्ञशिष्टाशिन सन्तः मुच्छन्ते सर्वकिल्विषः।
भुजते ते स्वधं पापाः ये पचन्त्यात्मकारणत्॥

(३-१३)

यज्ञमय जीवन के अतिरिक्त जो भी कर्म हम करते है, वह बन्धन में डालने वाला है। जीवन के यज्ञ में अपने भरण-पोषण के लिए आहति डालो, परन्तु जो बच रहे उसे अपना न समक्त कर समाज के अर्पण कर दो। इसीको **'इदं न मम'** कहा है। तभी यज्ञ में **'इदन्नमम्'** पढ़ा जाता है। जो मेरे लिए था वह मैने ले लिया-अब यह बचा हुआ मेरा नहीं, समाज का है। इसी को समाजशास्त्रियों ने 'To everyone according to this needs' कहा है।

ग) **निष्काम कर्म का शुदध अर्थ-** निष्किाम कर्म का कभी-कभी यह अर्थ भी किया जाता है कि कर्म के फल की आशा को छोड़ दो। कर्म के फल की आशा को क्यों छोड़ दें ? कर्म तो फल के लिए ही किया जा है। गीता में कहा गया है-'मा कर्मफलहेतुर्भः' अर्थात्, कर्म के फल का तू हेतु नही है, तू कारण नही है, तू कारण तो कर्म करने का है, फल का हेतु-कारण फल देने वाला है।

श्रीकृष्ण को हम याद इसलिए नहीं करते क्योंकि उन्होंने कंस का वध किया, क्योंकि वे बड़े पहलवान थे- 'मसलमैन' थे। उनको इसलिए भी नही याद किया जाता क्योंकि वे बड़ राजनीतिज्ञ थे। पहलवान उनसे बड़े बड़े हुए हैं, और मौजूद है, राजनीतिज्ञ भी उनसे बड़े-बड़े हुए और मौजूद है। कहते है, श्रीकृष्ण को हुए ५,०० साल हो गये। पाँच हजार नहीं तो हजारों साल तो हुए ही हैं। इतना समय वीत जाने पर एक व्यक्ति की स्मृति बनी रहे, इसका कोई विशेष कारण होना चाहिए। वह कारण क्या है ?

श्रीकृष्ण को हजारों सालों से हम इसलिए याद किए जा रहे हैं क्योंकि उन्होंने जीवन की एक ऐसी खोज की थी जो संसार में किसी दूसरे न नही की । उन्होंने खोज यह की थी कि जीवन को निभाने का गुर क्या है । यह खोज 'कर्म' के विषय में थी । मनुष्य कर्म किये बिना रह नहीं सकता, कर्म करते-करते उसमें ऐसा उलझ जाता है जैसे जाल में फंस गया । उनकी खोज यह थी कि कर्म तो करना ही पड़ता है-कर्म करते रहें, परन्तु इसके जाल से निकले रहें । ऐसा मार्ग कौन-सा है-श्रीकृष्ण ने इसी मार्ग की खोज की थी । वह मार्ग ही 'निष्काम कर्म' है जिस पर गीता-जैसा विस्तृत ग्रन्थ लिखा गया है । निष्काम कर्म के अद्‌भुत विचार को जन्म देने के कारण ही श्रीकृष्ण का महत्व है ।

निष्काम कर्म क्या है ? गीता में इसी की चर्चा है । गीता में जो शब्द प्रयोग किये गये हैं, वे हैं-कर्म, विकर्म, अकर्म तथा निष्काम कर्म । इनका आपस में क्या सम्ब्ध है ? गीता का श्लोक है-

कर्मणो ह् यपि बौद्धव्यम् बौद्धव्याम् च विकर्मणः । अकर्मणश्च बौद्धव्यम् गहना कर्मणो गति : ।।

इसका अर्थ है कि कर्म को जानो, विकर्म को जानो, अकर्म को जानो-इन तीनों को जान लोगे तो निष्काम कर्म को जान लोगें । वह कैसे ? इस बात की आचार्य विनोबा भावे ने यों समझाया है :

'कर्म' तो हम सब करते हैं । उसमें जान डाल देना 'विकर्म' का काम है । 'विकर्म' का अर्थ बुरा कर्म नहीं, विशेष कर्म है । ब कर्म में विकर्म की पुट डाल देते है, तब वह 'अकर्म' हो जाता है- 'अकर्म'- अर्थात् जैसे कर्म किया ही नही । सारा झगड़ा तो कर्म का है, कर्म से ही मनुष्य उलझन में पड़ जाता है । उस उलझन में से निकलने का एक ही रास्ता है । विकर्म से कर्म करें, फिर कर्म की उलझन नहीं पड़ती, विकर्म से-अर्थातृतन्मयता से कर्म में डूब जायें । विकर्म-अर्थात् विशेष कर्म ।

विशेष कर्म दो तरह का हो सकता हैं-स्वार्थ से, निःस्वार्थः निःस्वार्थ-भाव से जो विशेष कर्म किया जाता है, दूसरे को नुकसान न पहुँचान के लिए किया जाता है, वह विकर्म है । अपना स्वार्थ भले ही हो, अपना प्रयोजन भले ती सिद्ध हो, परन्तु वह दूसरे को कष्ट देने वाला न हो, दूसरे का अहित करने वाला न हो, वह विकर्म है । विकर्म, निःस्वार्थ, निष्काम-इन तीनो शब्दों का एक ही अर्थ है । जब ऐसे कर्म में मनुष्य प्रवृत्त होता है, तब कर्म की उलझन में से निकल जाता है ।

माता पुत्र को चपेट मारती है, परन्तु वह माता से ज्यादा चिपटता जाता है । माता ने अपने स्वार्थ से कर्म नहीं किया, पुत्र के स्वार्थ से कर्म दिया, इसलिए उसकी चपेट चपेट नहीं रहती । आप बच्चे को चपत लगा कर देखो तो, वह सहन नहीं करेगा । जब विकर्मसे-विशेषकर्म से तन्मयता से-निःस्वार्थ कर्म किया जाता है, तव वह ऐसा ही होता है मानो किया ही नही, उसका बोझ महसूस नहीं होता । वाचस्पति मिश्र शंकर-भाष्य की टीका लिख रहे थे । दिनों बीत गये थे । भोजन का समय आता, थाली परोसी सामने आ जाती । भोजन कर लेते और तन्मयता से अपने काम में लगे रहते । एक दिन लिखते-लिखते रात हो गई, अन्तिम पृष्ठ था, बत्ती बुझने लगी । सोचा, बती की तरफ ध्यान दूँ तो लिखना बन्द हो जाता है, न दूं तो बत्ती बुझ जायेगी । यह बात उनकी पत्नी ने भॉप ली । उसने दीये में तेल डाल दिया । पूछा-देवी, तूने बड़ा उपकार किया-तू कौन है ? उसने कहा-मुझे नहीं जानते, मैं तुम्हारी पत्नी हूँ । पूछा-अच्छा, क्या चाहिए ? कहा-पुत्र । बोले-पुत्र से नाम कब तक चलेगा ! टीका का नाम 'भामती' रख दिया जिससे भामती का नाम अमर हो गया । इसे कहते है-लगे रहकर न लगे रहना, विकर्म कर्म करना, निष्काम कर्म करना । निष्काम कर्म बराबर है कर्म+विकर्म=अकर्म या निष्काम कर्म ।। गीता के निष्काम कर्म का यही फ़ार्मूला है ।

अनासक्त कर्म कैसा है ? कर्म तो बन्धन में डालहै, परन्तु अनासक्त कर्म ऐसा है जैसे हाथ में जहर की डली पकड़ी हो, उसका जहर नहीं चढ़ता हो । अगर हाथ में चीर पड़ा हो तो उसी का जहर सारे शरीर में फैल जाता है । आसक्ति वह चीर है जो कर्म के बन्धन को सारे शरीर में फैला देता है ।

११) **निष्काम कर्म का महत्त्व-** धनासक्त कर्म की असझाने के लिए एक महात्मा ने दृष्टान्त दिया, जो समझने लाय है-

एक मनुष्य था । उसके तीन मित्र थे । एक मित्र ऐसा था जिसके लिए वह जान देता था । दूसरा मित्र दूसरे नाबर पर था । समझता था कि मौके पर काम आ ही जाएगा । तीसरा मित्र ऐसा था जिसकी तरफ वह ध्यान नही देता था । एक दिन अचानक उस पर मुसीबत आ पड़ी, उस पर संगीन मुकदमा दायर हो गया । वह भागा-भागा अपने अन्तरंगतम मित्र के पास पहुँचा, जिस पर वह जान देता था । सारी राम-कहनी कह सुनाई । उसनेकहा- 'भाई, हमारी-तुम्हारी मित्रता तो है, परन्तु यह धर तक ही सीमित है । घर के बाहर के झगड़ों में मैं साथ नही दे सकता ।' उधर से निराश होकर वह दूसरे मित्र के पास जा रोया । उसने कहा- 'मैं तुम्हारा साथ तो दूंगा, परन्तु कचहरी के बाहर तक । भीतर जाकर तो तुम्हें अपना मुकदमा अपने-आप लड़ना होगा ।' इन दोनों से निराश होकर उसने तीसरे मित्रका दरवाजा खटखटाया । वह झट उसके साथ हो लिया । वह घर के बाहर, कचहरी तक ही नहीं गया, कचहरी में जाकर उसने उसका मुकदमा लड़ा । प्रत्येक मनुष्य के तीन मित्र होते है । पहला मित्र धन-दौलत सम्पति है, दूसरे मित्र सगे-सम्बन्धी है, तीसरे मित्र सत्कर्म, निष्काम कर्म हैं । मनुष्य सम्पत्ति को सबसे बड़ा मित्र समझता है, उसके लिए जान तक दे डालता है, परन्तु समय आने पर यह साथ नहीं देती । दूसरे मित्र सगे-सम्बन्धी हैं । है । वे कचहरी के दरवाचे तक साथ जाते है, श्मशान में चार कन्धों पर रख कर वही छोड़ चले आते हैं । तीसरे मित्र सत्कर्म, निष्काम कर्म, निस्संग कर्म, निःस्वार्थ कर्म हैं जो न केवल इस जीव में, इस कचहरी में हमारा मुकदमा लड़ते हैं, बल्कि इसके बाद की कचहरी में भी हमारे साथ जाते है-उन्हीं को हम भूले रहते हैं । यही निष्काम कर्म है जो अपने ही भले के लिए नहीं, संसार-मात्र के भले के लिए किये जाते हैं । इसी को लक्ष्य में रखकर कहा गया है :

भ्रष्टादश पुराणेषु ध्यासस्य वचन द्वयम् ।
परोपकारः पुण्याय पापाय परपीडनम् ।।

'सत्याथ प्रकाश' का तेलुगु संस्करण लोकार्पित

हैदराबाद, 6 अगस्त (स्वतंत्र वार्ता)। आर्य प्रतिनिधि सभा आ.प्र. तेलंगाना के तत्वावधान में सत्यार्थ प्रकाश के तेलुगु संस्करण का लोकार्पण समारोह प्रधान सभा के ठाकुर लक्ष्मण सिंह की अध्यक्षता में संपन्न हुआ। मुख्य अतिथि पूर्व केन्द्रीय मंत्री बंडारु दत्तात्रेय ने पुस्तक का लोकार्पण किया। इस अवसर पर आर्य जगत के विद्वान, साधु- संत, गुरुकुलों के आचार्य व आचार्यनी आदि उपस्थित थे। इस अवसर पर विशेषश अतिथि के रूप में आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश के महामंत्री व दयानंद गुरुकुल के आचार्य स्वामी धर्मेश्वरानंद उपस्तिथ थे। सभा का संचालन करते हुए सभा मंत्री प्रो. विठ्ठल राव आर्य ने महर्षि दयानन्द सरस्वती कृत कालजयी ग्रंथ का विशेष रूप से परिचय कराया कि इस पुस्तक ने हजारों-हजारों लोगों को प्रेरित किया है। संसार की लगभग 20 भाषाओं में सत्यार्थ प्रकाश का अनुवाद हुआ है। यह पुस्तक समाज के घोर अंधकार के समय में पाखण्ड के खिलाफ तथा सभी प्रकार के मतमतान्तरों में फैले अंधविश्वास के खिलाफ तथा तार्किक ढंग से और विज्ञान सम्मत ढंग से वेद पर आधारित लिखा गया यह ग्रंथ अमूल्य है। इस अवसर पर स्वामी ब्रह्मानंद सरस्वतीजी ने कहा कि संतान का निर्माण माता करती है, इसलिये माता निर्माता भवति कहा गया है। भारत समाज में संतान निर्माण पर वेदों द्वारा प्रतिपादित संतान निर्माण विज्ञान को समझने और समझाने की जरूरत है तभी समाज और राष्ट्र का निर्माण संभव है। मुख्य अतिथि पूर्व केंद्रीय मंत्री बंडारु दत्तात्रेय ने सत्यर्थ प्रकाश पुस्तक का लोकार्पण करने के बाद उपस्थित सारे विद्वानों का सम्मान किया। पश्चात सभा को संबोधित करते हुए कहा कि सत्यार्थ प्रकाश एक अद्भुत ग्रंथ है। राष्ट्र निर्माण में स्वामी दयानंद सरस्वती, उनके द्वारा रचित ग्रंथ सत्यार्थ प्रकाश और आर्य समाज ने आजादी के आंदोलन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। सांस्कृतिक पुनर्जागरण का शंखनाद तथा धार्मिक, सामाजिक सुधार का आंदोलन मात्र आर्य समाज ने किया है। आर्य समाज न होता तो निज़ाम से हैदराबाद की मुक्ति भी सम्भव नहीं थी। आर्य समाज एक विचार का आंदोलन है। स्वामी धर्मेश्वरानंद ने कहा कि सामान्य से सामान्य गांव का किसान भी आर्य समाज की शिक्षाओं से प्रभावित था। वह अपने रोज़मर्रा के जीवन से समय निकालकर घूम-घूम कर सत्यार्थ प्रकाश की प्रतियों को बेचा करता था। कई लोगों को सत्यार्थ प्रकाश ग्रंथ नेप्रभावित किया है इस पकर लोगों ने अपना जीवन समर्पित किया साधु-संत बन गए। आज की आवश्यकता है कि हजारों हजारों की संख्या में सत्यार्थ प्रकाश का वितरण किया जाय, तभी समाज में व्याप्त पाखंड को समाप्त किया जा सकता है।

सभा उपप्रधान डॉ. सी.एच. चन्द्रय्या जी द्वारा ज्योतिबा फूले के जीवन चरित्र पर रचित पुस्तक का अनावरण करते हुए श्री बण्डारू दत्तात्रेय जी व अन्य ।

ఆర్య సమాజ సంస్థాపకులైన మహర్షి స్వామి దయానంద సరస్వతి గారి జీవిత చరిత్ర మరియు వారు జీవితాంతము సమాజ శ్రేయస్సుకై
చేసిన కార్యకలాపాల పైన గొప్ప ప్రబంధ కావ్య గ్రంథము ను రచించిన కీ॥ శే॥ మాచిరాజు శివరామ రాజు గారి

దయానంద ప్రబంధ

కావ్య గ్రంథమును ఆవిష్కరిస్తున్న మాజీ కేంద్ర మంత్రి శ్రీ బండారు దత్తాత్రేయ గారు, స్వామి బ్రహ్మానంద సరస్వతి గారు.
ప్రక్కనే కీ॥ శే॥ శివరామ రాజు గారి సతీమణి శ్రీమతి మాచిరాజు అమృత కుమారి గారు ఉన్నారు.
చిత్రంలో డా॥ వసుధా శాస్త్రీ గారిని మరియు పరిశ్రమల అధిపతి శ్రీ దయానంద గౌరి గారిని చూడవచ్చును.

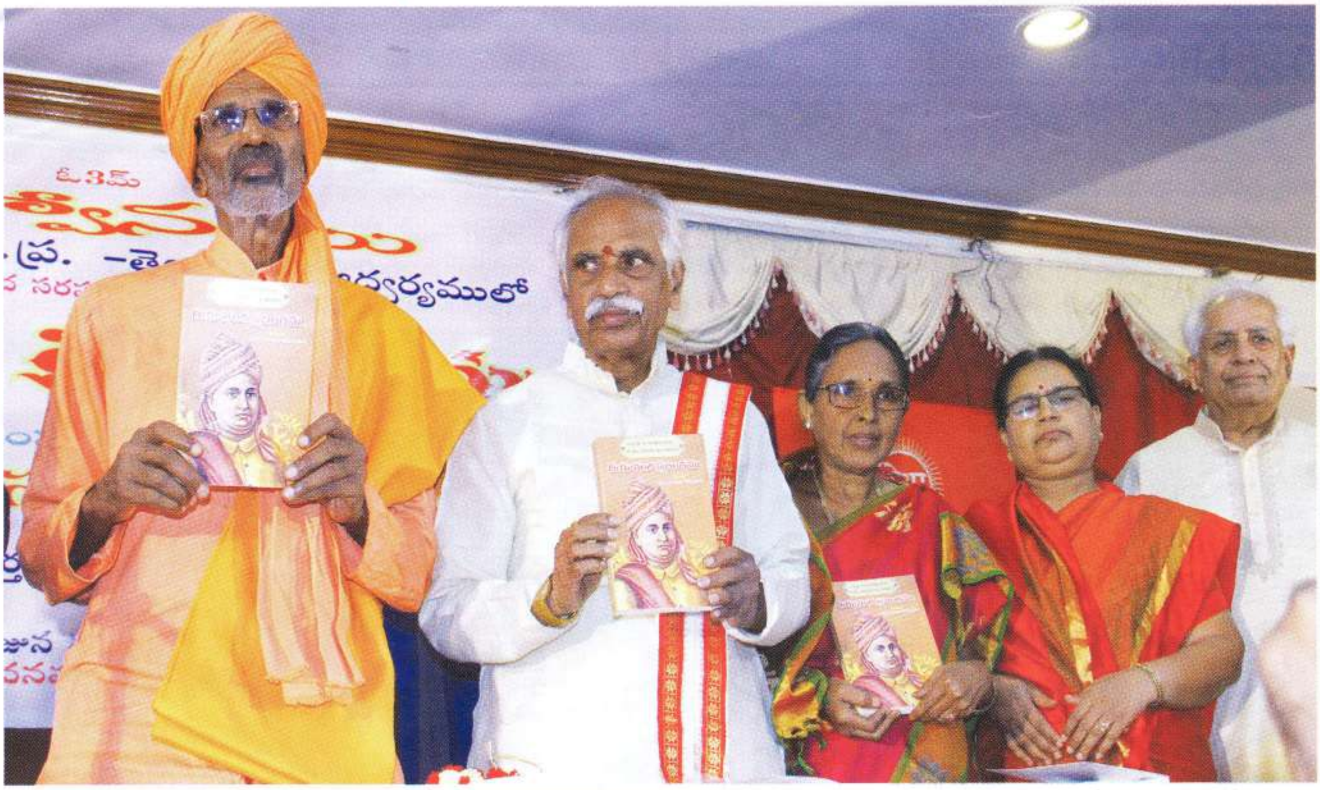

వివాదములో చిక్కుకున్న గురుకుల ఘట్‌కేశ్వర్ భూములను రాష్ట్ర హైకోర్టులో ఒక మలుపు తిప్పిన గొప్ప సమాజ సేవి గౌ॥ చంద్రసేన రెడ్డి గారిని
సత్యార్థ ప్రకాశ గ్రంథావిష్కరణ సందర్భములో ఏర్పాటైన సభలో సన్మానిస్తున్న గౌ॥ మాజి కేంద్ర మంత్రి శ్రీ బండారు దత్తాత్రేయ గారు. చిత్రములో ఇతరలను చూడవచ్చును.

Date of Publication 2nd and 17th of every Month, Date of Posting 3rd and 18th of every Month
आर्य जीवन 18-08-2019 Registered-Reg. No. HD/783/2018-20 RNI No. 52990/93

ఆర్య జీవన్

హిందీ-తెలుగు ద్విభాషా పక్ష పత్రిక

Editor : Sri Vithal Rao Arya, M.Sc. LL.B., Sahityaratna.
Arya Pratinidhi Sabha AP-Telangana, Sultan Bazar, Hyderabad-500095.
Phone No. : 040-66758707, 24753827, Fax : 040-24557946.
Annual Subscription Rs. 250/- సంపాదకులు : శ్రీ విఠల్ రావు ఆర్య, మంత్రి సభ.

To,

దయానంద ప్రబంధ

కావ్య గ్రంథమును రచించిన కీ॥ శే॥ మాచిరాజు శివరామ రాజు గారి సతీమణి శ్రీమతి మాచిరాజు అమృత కుమారి గారిని సన్మానిస్తున్న మాజీ కేంద్ర మంత్రి శ్రీ బండారు దత్తాత్రేయ గారు.

చిత్రంలో సభ మంత్రి శ్రీ విఠల్ రావు ఆర్య గారి మరియు సభ ప్రధాన్ డా॥ లక్ష్మణ్ సింగ్ గారిని చూడవచ్చును. క్రింద శ్రీ దయానంద గౌరి గారు, శ్రీమతి మీరా గౌరి గారు దీపప్రజ్వలన చేస్తున్న దృశ్యము.

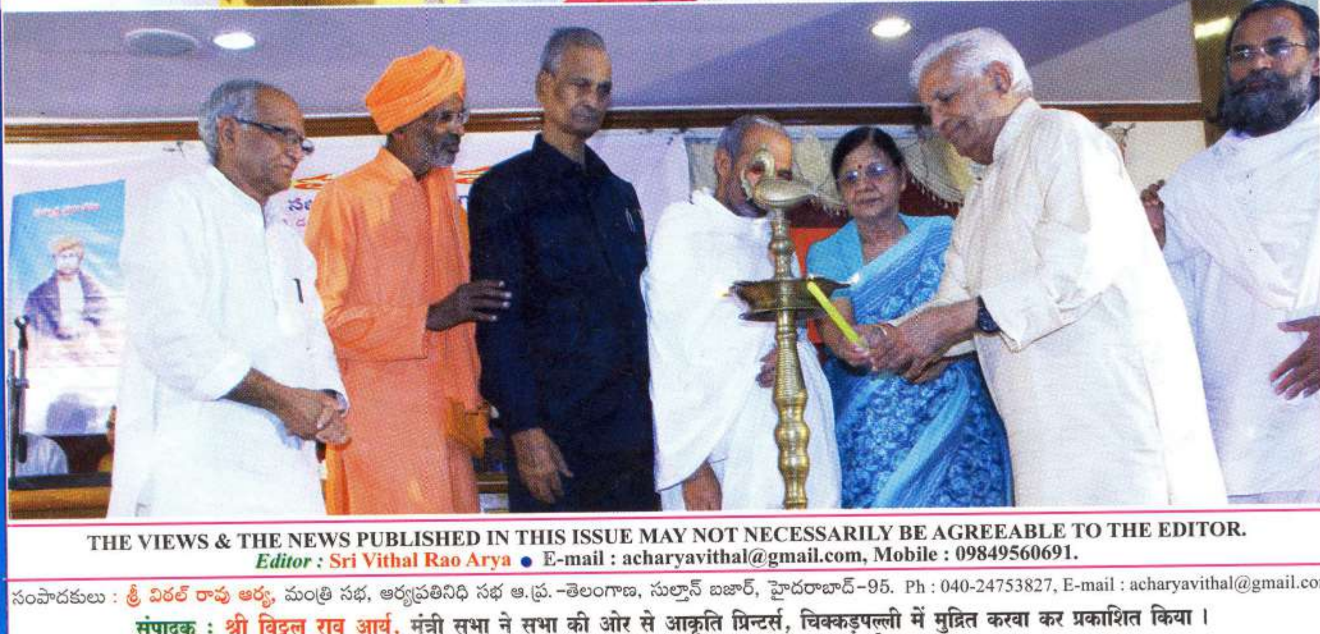

THE VIEWS & THE NEWS PUBLISHED IN THIS ISSUE MAY NOT NECESSARILY BE AGREEABLE TO THE EDITOR.
Editor : Sri Vithal Rao Arya • E-mail : acharyavithal@gmail.com, Mobile : 09849560691.

సంపాదకులు : శ్రీ విఠల్ రావు ఆర్య, మంత్రి సభ, ఆర్యప్రతినిధి సభ ఆ.ప్ర.-తెలంగాణ, సుల్తాన్ బజార్, హైదరాబాద్-95. Ph : 040-24753827, E-mail : acharyavithal@gmail.com

संपादक : श्री विट्ठल राव आर्य, मंत्री सभा ने सभा की ओर से आकृति प्रिन्टर्स, चिक्कड़पल्ली में मुद्रित करवा कर प्रकाशित किया ।
प्रकाशक : आर्य प्रतिनिधि सभा, आं.प्र. -तेलंगाना, सुल्तान बाज़ार, हैदराबाद-500 095.